मुद्रक
सरयू प्रसाद पाडेय 'विशारद'
नागरी प्रेस, दारागंज,
प्रयाग

अप्सरा

मैं पन्द्रह वर्ष की उम्र पार कर चुका था, जब उसके प्रथम दर्शन हुए थे। मुझे स्मरण आता है, वह साक्षात्कार वैशाख के किसी सुन्दर सन्ध्याकाल में हुआ था। उस दिन मैं एकाकी, नगर के बाहर प्रशान्त प्रकृति के अंचल में, लक्ष्यहीन स्वप्न देखता हुआ-सा, घूमने निकल पड़ा था। मैं क्यों चल रहा था, यह तो मैं ही नहीं जानता था, पर कुछ समय बीत चला। विजनता मुझे सदैव प्रिय रही है।

कनक-रजित नील-समुद्र के बीच सूर्य अस्त हो गया। रजनी का छाया-अञ्चल समस्त क्षेत्र-प्रान्त को घेर रहा था। नील गगन

में तारिकाएँ एक-एक कर खिल रही थीं। जलतट के मेढकों का रव दिगन्त व्यापी हो रहा था। किसी ओर से बुलबुल की गीति-लहरी उच्छ्वसित होकर प्राणों का स्पर्श कर जाती थी। समीर के मृदु मन्द हिल्लोल से तरु-पल्लव सिहर उठे थे। तृणपुञ्ज का नृत्य नेत्र-रंजक था। क्षितिज के एक छोर मे जलदावरण के भीतर शुभ्र और दीप्तिमान चन्द्रमा जैसे शयन कर रहा था। उसकी रजत-धवल किरणे विभावरी के आलिंगनपाश मे बद्ध थीं! नीड़स्थित पक्षिकुल का गान प्राणोन्मादिनी वायु की सुरभित लहरों पर दौड़ रहा था। मेरे हृदय का द्वार उनके उपभोग मे उन्मुक्त पड़ा था।

उसी समय दस-पाँच तरुणियाँ, एक दूसरे का हाथ अपने हाथ मे लिये, शहर की ओर, गाती हुई लौट रही थीं! वे सब की सब वसन्त का गान—प्रेम का गान—एक स्वर में गा रही थीं। उस सुनसान मैदान की निस्तब्धता के बीच उनका तरुण कन्ठ-स्वर दूरस्थ प्रपात के शब्द की भाँति जैसे प्रतिध्वनित हो रहा था। शुभ्र छाया-रात्रि मे, नृत्य गान के लिये किसी सरोवर के तट पर एकत्र होकर ऊषा की प्रथम किरणों के उन्मेष के पूर्व ही छिप जाने वाली परियों की तरह वे सब जान पड़ती थी, जिनके मुख-मण्डल तारिकाओ के मधुर आलोक में झलमला रहे थे। मै उन सबों के परिच्छद के हिलने से उत्पन्न हुए खस-खस शब्द को स्पष्ट सुन पाता था। उनके शरीर से निकली हुई सुगन्ध हवा मे ऐसी भर गयी थी कि मै लोभवश शीघ्र शीघ्र श्वास खींचकर आघ्राण लेने लगा। उसकी प्रमत्तता जीवन की समस्त वीथिकाओ में भर लेने के लिये मैं व्याकुल हो उठा।

परन्तु जब वे रमणियाँ अन्तर्हित हो गयीं, तब न जाने कैसी एक अननुभूत पूर्व व्याकुलता मेरे हृदय पर अधिकार कर बैठी। उस मैदान के किनारे एक ह्रद था जिस पर जाकर मैं बैठ गया। मेरे सामने वह विस्तृत मैदान हरित तृण-राजि के समुद्र-सा भासित हो रहा था। मैं अपने दोनों हाथों के ऊपर अपना सिर झुकाकर अन्तस्तल में जो कम्पन हो रहा था, उसके शब्द को सुनने लगा। उस शब्द के अर्थ को समझने की चेष्टा करते करते मैं गम्भीर और काल्पनिक स्वप्न के बीच डूब चला।

मुझे जिन बातों का अनुभव होने लगा, वह तो कथा के रूप में कहने की वस्तु नहीं। फिर भी एक दारुण वेदना से हृदय-पिंड जैसे फट जायगा—ऐसी धारणा होने लगी। हृदय में जैसे एक वेगवान् प्रपात ढका हुआ अपना मार्ग खोज रहा हो, बन्दी तरंग मालाएँ तीव्र उद्वेग से क्रान्ति कर रही थीं। मैं रोने लगा। आँसू मेरे-सूखे मुँह पर से नीचे गिर रहे थे। उन अश्रु-मुक्ताओं के बीच में जैसे आनन्द की ज्योति झलक रही थी।

कुछ क्षण इसी तरह पड़ा रहा। इसके बाद जब उठ कर खड़ा हुआ, तब मैंने देखा—स्वर्ग की एक देवी, मेरे सामने, थोड़ी ही दूर पर खड़ी होकर, मेरी ओर अपनी मृदु-मधुर मुस्कान डाल, देख रही है। एक पद्माधिक सुन्दर परिच्छद उसके अंग अंग को ढके हुए है। संगमरमर जैसे निर्मलोज्ज्वल उसके युगल चरण तृण-राशि के ऊपर श्वेत पुष्प की तरह खिले हुए हैं। उसके सुनहले केश-गुच्छ स्कन्ध-देश पर स्वच्छन्द भाव से लहरा रहे थे। जिस कुसुम-कीरीट से उसका मस्तक विभूषित

था, उसी कुसुम-सदृश सुन्दर और टटके उसके दोनों कपोल उस ज्योत्स्ना में चमक रहे थे। दुग्ध फेनोज्ज्वल मुख-मण्डल पर, शरच्चन्द्रिका में खिली हुई अपराजिता की दो कलियों की तरह, उसकी दोनों बड़ी-बड़ी आँखें जैसे उसके प्राणों का सकेत इङ्गित कर रही थीं। एक बाहु उसके वक्षदेश को ढके था, दूसरे से वह मुझे आहूत कर रही थी।

मैं अनेक क्षण मौन रह कर निश्चल दृष्टि से उसे देखता ही रह गया। निश्चय ही वह नन्दन-कानन की भूली हुई अप्सरा सी प्रतीत होती थी। उसके सौन्दर्य को कभी कोई पार्थिव-ललना-सुलभ नहीं कह सकता था। उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग से स्वर्गीय छवि-छटा विकीर्ण हो रही थी। मैं उसके परिचय के लिए व्याकुल हो उठा। उसकी ओर हाथ बढ़ाकर मैंने पूछा—'देवि ! तुम कौन हो ?'

नैशवायु की अपेक्षा भी मृदु-मञ्जु स्वर मे उसने कहा—'प्रिय ! मै अप्सरा हूँ। मुझे तुम्हारे जन्मकाल मे ही तुम्हारे भाग्य की शीतल शय्या पर सोने का आदेश अपने राजा से मिला था। आज तुम्हारे हृदय मे सर्वप्रथम जो व्याकुलता उत्पन्न हुई, उसी के आवेग मे मैं जाग पड़ी हूँ। मेरा जीवन तुम्हारे जीवन से सघटित हुआ है। मैं तुम्हारी सगिनी हूँ। मै तुम्हारे जीवन का अर्ध-पथ तुम्हारे साथ ही पूर्ण करूँगी। पुष्प जैसे अपना पूर्ण विकास करके, सूखकर, फल का एक अत्यन्त क्षुद्र रूप डाल को सौंपकर, झर जाता है, वैसे ही मै एक दिन मध्य-पथ में तुमसे विच्छिन्न हो जाऊँगी। देखो, वह दिन भी अधिक दूर नहीं। सुन्दर गुलाब के फूल का जैसे एक प्रभात

भर ही चिर-आयुष्य है, वैसी ही मेरी भी कठोर नियति है, मुझे प्यार करके यह भलीभाँति याद रखना कि एक दिन मुझे विसर्जन करना होगा। मेरा जब प्राण-वियोग होगा, तब हजार बार रोकर और लाखों दुःख प्रकट करके भी मुझे बचा न पाओगे। शीघ्र प्रस्तुत हो जाओ। मेरे हाथ मे माया का कोई सम्मोहन दण्ड नहीं है, केवल मेरे केश-सम्भार मे गुँथी हुई यह पुष्पराजि ही मेरी शृङ्गार-श्री है। किन्तु मै तुम्हारे चरणों मे इतने विपुल ऐश्वर्य का उपहार रखूँगी कि जितना आज तक किसी राजकुमार की प्रेयसी ने सात द्वीपों की राजकुमारी होने पर भी उसकी पूजा में उत्सर्ग न किया होगा। तुम्हारे उन्नत मस्तक पर मै वह मुकुट पहना दूँगी, जिसको पृथ्वी के समस्त राजा अपने राज्य का मूल्य देकर भी तुमसे पाने के लिये अपने को भाग्यवान समझेंगे। उन अनुचरो को बुलाकर तुम्हारी सेवा में उपस्थित करूँगी, जिनकी समता राज दरबार मे दास वृत्ति करनेवाले लोग कभी कर ही नही सकते। मैं अदृश्य रह कर भी सदैव तुम्हारे सङ्ग-सङ्ग रहूँगी। सर्वत्र तुम मेरा प्रत्यक्ष प्रभाव अनुभव करोगे। जिन सब मार्गों से तुम गमन करोगे, उन सब में मै तुम्हारी सहचरी रहूँगी। रात्रि मे तुम्हारी शय्या मुझसे सुरभित होगी। प्रत्येक प्रभात तुम्हारे लिये जीवनमय-पुलकमय हो, इसलिये, हे देवता! सम्पूर्ण ऋतुओं को मैं आत्म-दान दूँगी। आह! कितने सुन्दर-सुन्दर उत्सवों में तुम मेरा उपभोग करोगे। तुम्हें केवल उन सब चीजों को जो तुम्हारे समीप मैं ले आऊँगी, मेरा साथ छोड़ने के पहले जान कर सीख लेना होगा कि, कितने दीर्घ स्पर्श से क्या परिम्लान होगा और

कितना उपभोग करने से क्या सम्पूर्ण निःशेष हो जायगा, क्योंकि मेरे जाने के बाद जो अर्द्ध विशिष्ट पथ तुम्हें पूर्ण करना है, उसकी सम्बल-व्यवस्था तुम इसे जान कर ही कर सकोगे। देखो, मैं तुमसे पहले ही कह चुकी हूँ कि, मैं अत्यन्त अल्प-काल तुम्हारे सङ्ग रहूँगी। किन्तु मेरे इस क्षणभगुर मूल्यवान जीवन को किञ्चिदपि काल-व्यापी बना देना भी तुम्हारे ही हाथ की बात है। मेरी रक्षा सदैव सचेष्ट रह कर ही कर सकोगे, अन्यथा, मुझे अकाल नष्ट कर तुम निरीह बन जाओगे। मेरे सुकुमार चरण तुम्हारी यात्रा में क्लान्त होकर गति-हीन न हो जायँ और मेरे इन कमल-कोमल सुन्दर कपोलों की लावण्य-प्रभा कान्तिहीन न हो जाय, एतदर्थ मुझे ज्वलन्त वासना की ज्वाला-मयी आतपच्छटा से दूर रखकर अपनी यात्रा करना। मुझे लेकर निविड़च्छाया वन-प्रदेश का पर्यटन करना, जिससे मेरे चले जाने पर जो दारुण कष्ट अनुभव करोगे, वह विपाक्त न हो जाय। हाँ, मेरी स्मृति जिससे तुम्हारे लिये सुखमयी स्मृति का सृजन हो, तुम्हारे जीवन की एक थाती होगी। मैं तुम्हारे सम्पूर्ण जीवन को अपनी एक ही किरण-धारा से प्रदीप्त तो न कर सकूँगी, यह सत्य है, किन्तु यदि रख सको, तो मेरे चले जाने के बहुत दिनों बाद तक भी तुम्हारे हृदय में मेरी उस मधुर स्मृति की कमनीय प्रतिबिम्ब-छटा रह सकेगी।'

इतना कहकर जिस प्रकार शिशु-परिचारिका पलने के ऊपर झुककर बच्चे का एक स्नेह-चुम्बन ले लेती है, उसी प्रकार उसने अपने शुभ्र मुखमण्डल को मेरे ऊपर झुकाकर मेरे मस्तक पर अपने होठों का मृदु स्पर्श अंकित कर दिया। उसके वे अधर

चम्पा के पुष्प-दल के सदृश मृदुल और सुगन्ध-परिपूर्ण थे। उसके सुखावह आलिङ्गन के लिये मैंने अपने दोनों हाथ प्रसार दिये। किन्तु इसके पहले ही वह शुभ्र छाया मूर्त्ति स्वप्न के समान अन्तर्धान हो चुकी थी।

मैं उस सुनसान मैदान की एक पगडण्डी से लौटने लगा। पागलों की तरह कभी दौड़ता, कभी घासों पर लेटकर उन्हें अपने आँसुओं से तर करता, कभी किसी वृक्ष के तने को पकड़ कर उसका दृढालिङ्गन करता और मन ही मन सोचता कि यह वृक्ष मेरे पागलपन को देखकर काँप रहा है। कभी नक्षत्रों की ओर हाथ बढाकर उनके सग प्रेम-मुग्ध हृदय से वार्त्तालाप करता। कभी वृक्षों, कभी पुष्पों, कभी तृण-पुञ्जों के साथ अपनी मित्रता जोड़ता हुआ, मैं आगे बढने लगा। मुझे ज्ञान पड़ता था कि जैसे मेरे भीतर रस का एक प्रवाह फूटकर मेरे सर्वाङ्ग को प्लावित कर रहा है, मेरी सम्पूर्ण प्रकृति उस रसधार में मछली की भाँति तैर रही है और मैंने अपना सब कुछ उस अजस्र प्रवाह में प्रवाहित कर दिया है। मैं हँसने लगा, रोने लगा। एक प्रकार का अनिवर्चनीय सुख उस अज्ञात आनन्द के सागर के बीच दृष्टिगोचर हो रहा था।

प्राची का क्षितिज जब शुभ्र हो चला, तब मुझे ज्ञात होने लगा कि, जैसे आज यह सृष्टि का सर्वप्रथम जागरण मैं ही देख रहा हूँ। प्रसन्नता से मै नाँच उठा। गर्व-पूर्ण निःश्वास मेरे नासिका-रन्ध्र से फूट पड़े। क्षण भर के लिए मेरे मन में आया कि, जैसे मेरी आत्मा मेरी देह से बाहर हो, मुक्त लघु भाव से उड़कर सूर्य ने जो सब क्षीण वाष्प राशि तट-प्रदेश से अपने

किरण करों द्वारा खींच लिया है, उन्हीं परमाणुओं में मिल—वह एकाकार हो जायगी। मैं अत्युच्च शिखर से अपनी विजयी दृष्टि डालकर समग्र पृथ्वी का निरीक्षण करने लगा। यह अखिल भूमण्डल जैसे मेरे ही लिये सिरजा गया हो—मैं ही जैसे इसका एक मात्र सम्राट हूँ।

एक बार वह मेरे निकट और प्रकट हुई थी। उस समय मेरी उम्र तीस वर्ष से कुछ कम थी। यह आश्विन के एक सन्ध्याकाल की बात है। मैं नगर से अकेला ही बाहर निकल, लक्ष्यहीन, दुखी और उदास हो, एकान्त में आगे बढ़ने लगा। यद्यपि मुझे विजनता प्रिय नहीं लग रही थी।

आकाश मेघाच्छन्न था। शीतल वायु अपने आन्दोलन से तरुशिखा को विचलित कर रही थी। तरुओं की हरीभरी पत्तियों के बीच फलों की कैरियाँ लदी पड़ी थीं। दूर के गाँवों से कुत्तों और गीदड़ों के चीत्कार आकर उस निर्जनता को अपने गम्भीर रव से परिपूर्ण कर रहे थे। भीति-विह्वल पक्षि-कुल वृक्ष के पल्लवान्तरालों में घुसघुस कर अपने नीड़ खोज रहा था। पक्षियों के उड़ने से आकाश दागों से भरा दीखता था। इस शोकाच्छन्न प्रकृति के बीच मेरा मन म्लान हो रहा था। सुन्दर दिवस के अवसान में हृदय के ऊपर जो एक शीतल विषाद की छाया घिर आई थी, उसीसे अभिभूत होकर मै चैतन्य-हीन हो चला। एक घने वृक्ष के तले चुपचाप जाकर बैठ रहा। थोड़ी देर बाद दो रमणियों को मैंने अपने पास ही से धीरे-धीरे जाते हुए देखा। प्रत्येक अपने सिर पर कँटीली झाड़ियों का बोझ लिये हुए थीं, जो इस शीतकाल मे आग जलाने के काम आतीं।

आह! मेरी स्मृति जाग उठी! ठीक वही समय! अपूर्व सान्निध्य! बहुत दिन पूर्व ठीक इसी समय, किसी बैशाख के सन्ध्याकाल में, इसी जगह से कुछ नवयुवतियों को एक दूसरे का हाथ पकड़े, गान गाते हुए, जाते मैंने देखा था। मैं क्रमागत उसकी मन ही मन पर्यालोचना करने लगा। उसके बाद ही एक विवादमय गम्भीर अवसाद में निमज्जित हो गया।

इसके बाद उठकर देखा; मुझसे थोड़ी दूर पर, मेरे सामने ही, एक पाण्डुवर्ण की मूर्त्ति खड़ी मेरी ओर विषाद-पूर्ण दृष्टि से देख रही है। उसका स्वरूप इतना परिवर्तित हो गया था कि बड़े परिश्रम से, बड़े मनोयोग से, मैं उसे पहचान सका। उसके प्रथम-दर्शन के समय जो ज्योतिर्मयी आभा उसे घेरे हुए थी, उसका अब पता भी न था। उसके फटे चीथड़े कपड़ों से उसके जरा-जर्जर अवयव स्पष्ट दीख पड़ते थे। रक्त-प्लुत दोनों पैर और निर्जीव बाहु लतायें उसके अस्थि-पञ्जर के निकट शिथिल पड़ी थीं। आँखों की नीलिमा कोटरों में विलीन हो चुकी थी। कपोलों पर अश्रु-धाराओं की नील रेखाएँ अपना चिर-आवास बतला रही थीं। अभागिनी अपना देह-भार बड़े कष्ट से सहन किये हुए थी। वृन्तच्युत शुष्क पद्मदल की भाँति उसकी सम्पूर्ण श्री नष्ट हो गई थी। मैंने अनिच्छा पूर्वक जिज्ञासा की—'तुम क्या चाहती हो।'

'प्रिय बन्धु! हम लोगों के परस्पर-विच्छेद का समय आ गया। अब हम लोगों का सम्बन्ध न रहेगा। इसी से अन्तिम विदा लेने के लिये मैं उपस्थित हुई हूँ।' उस वृद्धा ने शोक सन्तप्त कण्ठ से कम्पित स्वर में धीरे से कहा।

'दूर हो' मैं बीच ही में उत्तेजित होकर बोल उठा—'शीघ्र यहाँ से दूर हो मिथ्यावादिनी ! तूने मेरे लिये क्या किया ? जो सब ऐश्वर्य देने के लिये तूने कहा था वे कहाँ हैं ? जीवन-यात्रा मे अनेक बार मैंने उन्हे ढूँढ़ा पर कुछ भी न पाया। जिस रत्न भाण्डार को तूने मेरे पदतल मे उत्सर्ग करने को कहा था, कहाँ है वह आज ? दैन्य छोडकर और कुछ तो मैंने नहीं पाया। मेरे मस्तक पर जो मुकुट पहनाने को तूने कहा था, वह क्या हुआ ? इस समय मेरे मस्तक पर काँटो का ताज छोड़कर और तो कुछ नहीं है। जिन दक्ष अनुचरों को देने के लिये तूने अङ्गीकार किया था, वे कहाँ गये ? तू कहती है—'मुझसे तेरा इस समय विच्छेद होगा', तो यदि तू ही मेरे दुःखों की जननी है, तेरे ही प्रभाव से यदि मेरा यह जीवन सकटापन्न हो गया है, तो तेरा विच्छेद ही मेरे लिये सुखकर होगा। तू मेरे सम्पूर्ण अमगलों की विधात्री है, तेरा सर्वनाश हो।'

'मै तुम्हारे अमगलो और दुःखों की जननी नहीं', वृद्धा ने दुःखित होकर कहा—'मनुष्य मुझे खोकर मुझे पहचान नहीं पाता। मै जिन विभूतियों का स्वामी उसे बनाये रहती हूँ उनका मूल्य वह भूल जाता है। उन सुखों का उपभोग फिर उसे उपलब्ध नहीं। यही उसकी नियति है। सब मनुष्यों की तरह तुम भी अकृतज्ञ हो। तुमने मुझे दोषी कहा है। मैंने तुम पर सदैव स्नेह किया है। क्षण मात्र में तुम मुझे पहचान सकोगे। उस समय मुझे जिस तरह प्रथम बार तुमने मुझे देखा था, उसी तरह एक बार और मुझे पाने की अभिलाषा को अपनी समस्त अवशिष्ट परमायु का मूल्य देकर पूर्ण करना चाहोगे। तुम

कातर भाव से उन विभूतियों के विषय में पूछते हो, जिन्हें मैंने तुम्हें देने को कहा था, पर जो सब सुख-सम्पदाओं को मैंने तुम्हे मुक्त हस्त हो दान दिया था, उनकी अवज्ञा तो तुम्हीं ने की। मुकुट की बात कहते हो न ? मैंने तो तुम्हारे मस्तक पर वसन्त प्रभात की नवीनता, उज्ज्वलता, सुषमा और शान्ति का मुकुट पहना दिया था और अनुचर ? प्रेम, विश्वास, आशा और मोहकता—ये सब मैंने तुम्हें अनुचर ही तो दिए थे ? तुम्हारी दीन दशा को मैंने इस तरह सुन्दर और प्रसन्नता-पूर्ण बना दिया था कि, अनेक प्रतापशाली एव ऐश्वर्य-गर्वित व्यक्ति अपनी अतुल सम्पत्ति की कौड़ी कौड़ी देकर उसका प्रसाद क्रय करने की आकाक्षा करते। तुम्हारी विजनता को मैंने मनोज्ञ स्वप्नों से परिपूर्ण कर दिया था। तुम्हारे लिए मैं तुम्हारी निराशा को भी प्यार करती थी। और उन आँसुओं के लिए ? आह ! मैंने तुम्हें इतनी मस्ती दी थी कि लाखो विपत्तियों के मॅड़राते रहने पर भी तुम एक बूँद आँसू न गिरा सको। तुम्हारे यात्रा पथ में, तुम्हारी रक्षा के लिए मैंने सदैव सचेष्ट रह कर अपनी दया को जाग्रत रक्खा है। मेरी सत्ता के बल से उस समय कौन तुम्हारा सुहृद और मित्र नहीं था ? आकाश तुम्हारे ऊपर प्रसन्नता की वर्षा करता था। पृथ्वी तुम्हारे पदतल के नीचे पुष्पित हो उठती थी। बतलाओ, इन समस्त उपहारों को लेकर तुमने क्या उपभोग किया ? इन सब में से किसी की भी रक्षा तुम कर पाये ? तुम्हारे यात्रा-पथ के दोनों ओर जो सुख के इतने बीज मैंने बोये थे, उनमे कुछ भी अवशिष्ट रहा है ? तुम यदि कुछ भी न बचा

सके, तो उसके लिए मेरा क्या दायित्व ? और तुम उसका उपभोग न कर सके, तो मेरा क्या दोष ?

उपर्युक्त बातें सुनकर जैसे एक नवीन आलोक से मेरी समस्त सत्ता आलोकित हो उठी। ऐसा जान पड़ने लगा, मानो आँखों के सामने से अन्धकार का आवरण दूर हो गया ? मेरा भीतर बाहर, सब स्पष्ट प्रत्यक्ष हो चला। मैं भीत-विह्वल हो उठा। चिल्ला कर कहा—'ओह, ठहरो, तुम चली मत जाओ। जिन विभूतियों की मैंने अवज्ञा की है, उन्हें फिर से एक बार मुझे दो, जिससे उन्हे एक दिन प्यार कर सकूँ—केवल एक घन्टा भी विश्वास कर सकूँ। यदि तुम मेरी इस कामना को परिपूर्ण करोगी, तो तुम चाहे कोई भी हो, मै मरते-मरते भी तुम्हें आशिर्वाद देता रहूँगा।'

उसने कहा—'हाय मेरी ही मृत्यु निकट है। तुम देख नहीं रहे हो ? मेरी ओर दृष्टि डाल कर देखो, मैंने बड़ा कष्ट पाया है। मेरा अब कुछ नहीं रहा, मेरी छाया-मात्र शेष है। बहुत दिनों से एक अशांत रोग मुझे दग्ध कर रहा है, एक सर्वग्रासी श्वास-वायु मेरे अस्थि-मांस-को शुष्क कर रही है। मेरे अन्तर का सम्पूर्ण जीवनोत्सव निःशेष हो गया है। मेरे हृत्पिण्डो मे रक्त आकर पहुँचता ही नहीं। मेरे हाथ का स्पर्श कर देखो, वह मृत्यु-शीतल निर्जीव मालूम पड़ेगा। पहले यदि तुमने इच्छा की होती, तो मै कुछ वर्षों तक और जीवित रह सकी होती। निष्ठुर ! मेरी अकाल मृत्यु के तुम्ही कारण हो। तुम्हारा अनुसरण करने में मेरी समस्त शक्ति क्षय हो चुकी है। मेरे दोनो पैर क्षत-विक्षत हो चुके हैं। तुम्हारे निकट मैंने कितनी

बार क्षमा चाही थी; किन्तु सब व्यर्थ हुआ। तुम 'चलो चलो' कहते गये, मैं चलती गई और श्रान्त-अवसन्न होकर भी हाँपते-हाँपते आगे बढ़ती रही। कटीली झाड़ियों से राह में मेरे वस्त्र चीथड़े हो गये। मध्यान्ह सूर्य के आतप मे मेरा मस्तक पागल होने लगा। तुमने जरा सा विश्राम—थोड़ा सा दम—लेने का अवकाश भी नहीं दिया। किसी एक कुसुम शोभित आश्रम अथवा कवि-कल्पना के से सुन्दर किसी सुख निकेतन को देखकर यदि मैं तुमसे कहती—'प्रिय ! यहाँ बड़ी सुखशान्ति है, रुककर कुछ दिन विश्राम कर लो', हा ! तुम क्षण भर के लिए भी उसका विचार न करते, बराबर आगे बढ़ते जाते। कौन से अत्याचार तुमने मुझ पर नहीं किये ? कितनी बार क्लान्त एव हताश होकर मैंने मन मे तुम्हें छोड़ जाने का विचार किया था, किन्तु हा ! तुम्हें मैं छोड़ न सकी। अकृतज्ञ ! तुम्हें मै प्यार करती थी। मैं तुमसे जब जरा भी अलग होती और तुम आश्चर्य से मुझे अपने पास न देख, सकेत अथवा करुण स्वर से पुकार उठते थे, तब मैं अपना सब दुःख भूलकर तुम्हारे निकट दौड़ी चली आती थी। मेरी सारी कठोरता, सारा अहभाव, तुम्हारे निकट नष्ट हो गया था। किन्तु आज सब शेष हो गया। प्रिय ! अब मैं कुछ नही कर सकती। मेरे रक्त का प्रवाह रुक रहा है, दृष्टि-शक्ति लुप्त हो रही है, पैर काँप रहे हैं ! आह ! आओ, एक बार अपने सुदृढ आलिङ्गन से मुझे तृप्त कर दो ! तुम्हारे हृदय मे मैंने प्राण-लाभ किया था, अब उसी पर मृत्यु भी प्राप्त करूँ।'

अपने दोनों हाथ उसके आलिङ्गन के लिए बढ़ाते हुए मैं

चिल्ला उठा—'नहीं, तुम मरोगी नहीं। मैं तुम्हें कदापि मरने न दूँगा। किन्तु, हे अजान पथिक! मुझे बता दो तुम कौन हो?'

उसने कहा—'इस समय मैं कुछ नहीं, किन्तु एक समय मैं थी तुम्हारी—"जवानी"।

उसकी यह बात सुनते ही मैं उसे पकड़ने के लिये उद्विग्न हो गया; किन्तु वह तो पहले ही अन्तर्हित हो गई थी। वहाँ केवल दो-चार फूल उसकी वेणी के गिरे पड़े थे। उन्हें मैंने चुन लिया, किन्तु उनमें कोई सुगन्ध न थी।

भर पेट

भोजन

मुझे जौ की उस समय की मुख-मुद्रा कभी नहीं भूलेगी जब मैंने उससे कहा,–'अच्छा, अब मैं वह काम करने जा रहा हूँ।'

वह बच्चे को दूध पिला रही थी। उसने मुख घुमाया तो बच्चे के मुँह से दूध निकल गया और वह हवा मे हाथ नचाने लगा। मैंने जौ के मुख पर दो प्रकार के भाव देखे, पहला भाव मेरे बोलने से पहिले, कटुता—दुख तथा क्रोध का था। परन्तु जब मैंने उपरोक्त शब्द कहे तो मैंने उसके मुख पर दूसरा भाव देखा। उसकी आँखे जैसे फैल गई और मुँह की रेखाये कठोर पड़ गई। उस समय की उसकी मुख-मुद्रा पर हमारा कल्पित भय तथा अभिमान सभी कुछ लिखा हुआ था।

'तुम वह काम नहीं कर सकोगे,' उसने कहा—उसके स्वर तक में भय समाया हुआ था।

मै अच्छी तरह जानता था कि मैं वह काम कर सकता था —मुझे वह काम करना ही होगा—पर मै उसके मुँह से यही सुनना चाहता था, इससे मुझे बल मिलता था। एक प्रकार से यह अच्छा था कि उसका विश्वास बना रहे कि हम अभी चोरी करने की अवस्था तक नहीं पहुँचे हैं।

'सब योजना बना ली है,' मैंने कहा।

उसने मेरी ओर देखा। पर मैंने उसकी ओर नहीं देखा। उसका चेहरा सफेद पड़ रहा था और आँखे बड़ी-बड़ी मालूम पड़ती थीं।

बिल जोर-जोर से रोने लगा। उसका मुँह खुला हुआ और आँखे मिची हुई थीं। वह उसकी गोद मे तौलिये पर लेटा हुआ था। जौ उसे घुटने पर हिलाने लगी, पर उसका चीखना रुका नहीं।

'उसे दूध पिला दो,' मैंने कहा। 'बेचारा भूखा है।'

जौ ने अपना चेहरा गिरा लिया और बिल को बाँहों में ले लिया। बिल के मुँह में दूध पहुँचने पर उसका रोना बन्द हो गया और सन्तोष का शब्द करके स्तनपान करने लगा।

मैं कमरे के एक कोने मे बिछी हुई खाट के सिरहाने जा खड़ा हुआ। वर्जीनिया तकिया मे मुँह गडाए पेट तक घुटने सिकोड़ कर सो रही थी। मैंने उसे पलट कर सीधा कर दिया तो उसका सारा शरीर काँपने लगा।

'उसे सोने दो,' जौ ने कहा। 'आज वह दिन भर पिन-पिनाती रही है।'

मैंने उसे फिर उलट दिया। उसके दुबले-पतले सफेद हाथ माथे पर जा पड़े। वह अपने ओठ चाटने लगी।

'मेरे पास थोडा सा खाने को है,'—मैंने कहा।

मेरी जेब में एक सूखा हुआ मीठा नीबू पड़ा था। तरकारी मन्डी मे जमीन पर गिरा देखकर मैंने उठा लिया था। मैंने उसे धोकर दे दिया। वर्जीनिया उसे चुपचाप चाटने लगी, उसकी आँखे टिमटिमाते हुए कमरे मे चारों ओर नाचती रहीं। मेरी दूसरी जेब में दो भूने हुए आलू थे। मैंने उन्हें निकाल कर हथेली पर रखते हुए कहा, 'जौ कुछ न होने से

यही अच्छा है। अपने लिए न सही बिल के लिए खा लो।' मैने कमरे के चारों तरफ़ एक दृष्टि डाली। 'अच्छा, अब मै चलता हूँ।'

जौ ने अपना सिर नहीं उठाया। वह बिल का मुँह निहार रही थी।

मैं चलने को उद्यत हुआ। जौ ने आँखें ऊपर उठाईं। बालों की एक लट आँखों के ऊपर आ गई, उन्हें हटाते हुए उसने कहा—'क्या तुम जा रहे हो?' सहसा वह उठ खड़ी हुई। उसने बिल को खाट पर लिटा दिया और मेरे पास आ खड़ी हुई। उसने एक क्षण मेरी ओर देखा। मैं समझ गया, वह क्या कहने जा रही है।

'जाओ, एक बार लारी से फिर मिलो', उसने कहा।

मैने अपना सिर हिलाया।

'वह फिर हमारी मदद करने को तैयार हो जायगा, मैं जानती हूँ।' उसने कहा।

'मै लारी के सामने हाथ फैलाना नहीं चाहता'—मैंने कहा।

'नहीं, यह काम करने से तो अच्छा है, उससे मिल लो। उसका काम अभी तक लगा हुआ है।'

'क्या वह फिर तुम्हारे आस-पास चक्कर लगाया करता है?' मैने पूछा। जौ ने अपनी आँखे बन्द कर लीं और बोली—'मार्टिन! कृपा करके पागल मत बनो।'

'पागल? मैं पागल नहीं हूँ।' पर मेरे मन में दुःख हुआ। मैने खेद-प्रकाश किया। मैने देखा, जौ फिर बिल के पास चली

गई और उसे गोद में उठा लिया। वह उसे दोनों बाँहों में हिलाने लगी। इसके बाद उसने मेरी ओर देखा और इस प्रकार बोली जैसे मैं बाहर घूमने जा रहा होऊँ, 'अच्छा मार्टिन, बिल के लिए दूध का डिब्बा लाना मत भूलना।'

मैं जीने से उतर कर नीचे गया। हम सब से ऊपर के खण्ड में रहते थे। पहले इस कमरे मे अङ्गर-खङ्गर भरा जाता था। जब मेरे ऊपर चार महीने का किराया चढ़ गया तो मकान मालिक का गुमाश्ता बोला, कि हम इस कमरे मे रह सकते हैं। 'कमरा अच्छा है', उसने कहा, 'इसमे कुछ सर्दी ज्यादा है। हम इसमें अँगीठी रख देंगे।'

मेरी योजना बहुत सरल थी। मैं इस पर दो सप्ताह से विचार कर रहा था। पहले तो मुझे सब कुछ बे-सिर-पैर की बातें मालूम पड़ती थीं। पर जैसे-जैसे दिन बीतते गए और मुझे कोई काम नहीं मिला, भोजन का प्रबन्ध होना और कठिन होता गया। मैं अपने मन में अधिकाधिक विस्तार से इस योजना पर विचार करने लगा, परन्तु प्रत्येक बार मुझे यह सोचकर हँसी आती थी, कि अन्त में क्या मुझे ऐसा ही करने पर उतारू होना पडेगा।

मैं दो साल तक बड़े पन्सारी की दूकान 'सी एन्ड डी स्टोर' पर नौकरी कर चुका था। पहले मुझे १८ रु० सप्ताह मिलते थे, फिर १५ रुपये मिलने लगे, फिर १२ रुपया और अन्त मे हवा खाने को मिलने लगी।

दूकान मे दो दरवाजे थे। एक बड़ा दरवाजा सड़क पर था और दूसरा पिछवाड़े गली में था। हम लोग पारसलों के चीड़

और दफ़्ती के बक्स उसी गली में चुन दिया करते थे। दूकान से सटी हुई पिछवाड़े एक कोठरी थी। वह कोठरी उस इमारत मे तो शामिल नहीं थी, पर बीच में एक खिड़की थी, जिससे होकर हम उसी कोठरी मे अपने कपड़े आदि टाँगने को जाया करते थे। दूकान के अन्दर सिगरेट पीना मना था, इसलिए हम लोग चुपके से उस कोठरी मे जाकर सिगरेट भी पिया करते थे। कोठरी के सामने की गली बहुत छोटी-सी थी। गली से सूरज की चमचमाती हुई रोशनी में सड़क पर आदमियों का ताँता साफ दिखाई पड़ता था। कभी-कभी मै घर लौटते समय इस गली मे ही सड़क पर निकल आता था।

मैने यह योजना बनाई थी कि उसी कोठरी का छोटा सा दरवाजा खोल कर दूकान मे चुपके से घुस जाऊँगा। बस!

खजाञ्ची की मेज के ऊपर रात भर रोशनी जलती रहती थी। कभी-कभी दराज मे थोड़ी सी रेजगी भी रहती थी, पर रुपये ८-१० से ज्यादा नहीं रहते थे। मुझे तो केवल खाने की चीजे लेनी थी, इसलिए दूकान के सामने जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी। मै काउन्टर के पीछे छिपता हुआ अपना कार्य कर सकता था। दूकान के बाहर एक पहरेदार डैनी रहता था। पर वह जब तक दूकान के भीतर न आए और झुक कर न देखे, उसे कुछ नही दिखाई पड़ सकता था।

मै मकान का दरवाजा बन्द कर बाहर निकल आया। सड़क पर दो चार आदमी आ-जा रहे थे। एक आदमी ओवर कोट पहने हुए सामने वाले मकान के पास खड़ा हुआ किसी से बातचीत कर रहा था। दो लड़के सिगरेट पीते हुए जा रहे थे।

एक औरत पटरी पर मेरी ही तरफ आ रही थी। पड़ोस में दर्जी अपनी दूकान बढा रहा था। मैं आड मे खडा हो गया। दर्जी ने दूकान की रोशनी बुझा दी और दरवाजा बन्द कर अपने रास्ते चला गया।

मैंने अपने कोट के बटन बन्द कर लिए और कालर कान तक चढा लिया और सुनसान सड़कों से होकर बाजार की ओर चल पडा। चौराहे के निकट पहुँच कर मै ठिठक गया। इसी समय किसी ने पीछे से मेरे कधे पर हाथ रख कर कहा 'कहो जी, मार्टिन।' मैं चौंक कर घूम पड़ा। मेरा हृदय जोरों से धडक रहा था। मैंने देखा लारी था।

'कहो जी, क्या है', मैंने कहा।

वह मुझे विचित्र रीति से देख रहा था। 'बड़े उदास दिखाई पड़ते हो,' उसने पूछा।

'नहीं तो', मैने कहा। 'मैं ठीक हूँ।'

'नहीं, तुम सुस्त दिखाई पडते हो।'

'सच ?'

'हाँ, तुम जैसे बीमार हो। क्या बात है ?'

'कुछ नही,' मैने कहा।

'सब ठीक चल रहा है ?'

'हाँ।'

'काम मिलने की कोई उम्मीद है ?'

'शायद जल्दी ही मिल जाय,' मैने कहा।

'दूकान पर तुम्हारा साथ छूट गया', लारी ने कहा। फिर उसने जेब से सिगरेट का बक्स निकाला। मुझे

एक सिगरेट देनी चाही, परन्तु पता नहीं क्यों मैंने इन्कार कर दिया। मुझे मालूम हुआ लारी जैसे घूरने लगा हो। 'अच्छा' कह कर उसने अपनी सिगरेट जलाई। दियासलाई के बक्स पर दूकान का नाम 'सी एन्ड डी स्टोर' छपा हुआ था। सिगरेट पीने वाले ग्राहकों के लिए दूकान में दियासलाई के बड़े-बड़े बन्डल भी लगे हुए थे।

'इस समय कहाँ जा रहे हो ?' लारी ने पूछा।

'जरा घूमने जा रहा हूँ,' मैंने कहा।

इसके बाद उसने पूछा, 'बच्चे अच्छी तरह हैं ?'

'हाँ वे अच्छी तरह हैं', मैंने कहा।

'और जौ ?'

मैंने लारी की ओर देखा। वह अपने स्वाभाविक ढङ्ग से खड़ा हुआ मेरे उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था।

मैंने उत्तर दिया, 'हाँ अच्छी तरह है।'

उसने फिर मेरी ओर विचित्र रीति से देखा। 'सुनो, मार्टिन !' उसने गम्भीरता-पूर्वक कहा। 'देखो, कोई बेवकूफी का काम मत कर बैठना।'

मैं धन्यवाद कह कर चौराहे से दूसरी सड़क पर मुड़ गया। वह चौराहे पर खड़ा हुआ मेरी ओर देखता रहा।

मुझे अपने कोट के भीतर गर्मी मालूम पड़ने लगी। मै सोचने लगा यह लारी कहाँ से आ टपका। मुझे याद आया कि जब मैं दूकान से बर्खास्त कर दिया गया था तो लारी ने मुझसे कहा था, 'देखो इससे चिंतित मत होना कोई और काम

मिल जायगा।' लारी सदा प्रसन्न और प्रफुल्लित रहता था। कभी-कभी दूकान पर जब वह लड़कों को सिगरेट पीते हुए देखता तो उन्हें शिक्षा देने लगता। एक बार उसने एक किरानी से शराब छुड़वाने की कोशिश की, पर उसका मजाक बनाया गया। लारी ने इसका बुरा नहीं माना। जब वह बीमार पड़ा तो उसीने सबसे पहले उसकी सेवा-सुश्रूषा की। यह लारी भी विचित्र जीव है। मैं कह नहीं सकता कि कब तक इस प्रकार परोपकारी बना रह सकेगा।

मैं दूकान के सामने' जा पहुँचा। मैंने खजाञ्ची की मेज के ऊपर बत्ती जलती हुई देखी। मैं पहले निश्चय कर लेना चाहता था कि दूकान के भीतर कोई नही है। मैं खड़ा होकर शीशे के चमकते हुए बन्द दरवाजे से भीतर देखने लगा। दूकान की सब परिचित चीजे मुझे विचित्र सी लग रही थीं। मैं घूम कर गली की ओर चल पडा। रास्ते में फल वाले की दूकान पड़ी जो मेरे दूकान से बर्खास्त किये जाने के बाद खुली थी। मैं गली मे ही जा रहा था कि मैंने उधर से सड़क की ओर आते हुए किसी के पैरों की आवाज सुनी। मैं झुक कर जूते के फीते बाँधने लगा। ऐसा करते समय जैसे सारा खून मेरे दिमाग की ओर दौड़ चला और सिर चकराने लगा। आँखों के सामने तितलियाँ उडने लगीं। मै दीवाल का सहारा लेकर खड़ा हो गया।

वह आदमी मेरी ओर दृष्टिपात किए बिना ही चला गया। पर मैं सीधा खडा नहीं हो सका। मुझे मालूम पड़ा जैसे मेरे ऊपर दीवाल झुक गई है। दूर सड़क पर सिनेमा घर की रोशनी

चमक रही थी और उसके सामने बहुत सी मोटरें एक कतार में खड़ी थीं।

मुझे कहवा का एक प्याला पीने जाना पड़ा। दूकानदार का नाम हरमैन था और दूकान का नाम 'हरमैन जलपान-गृह' था। हरमैन मुझसे मित्रता का व्यवहार करता था, पर वह सिर हिला-हिला कर यही रटता रहा, 'मार्टिन ! अब मेरा काम नहीं चल सकेगा, ईमान से कहता हूँ नहीं चल सकेगा।'

मैंने कहा,-'देखो, मे कुछ लूँगा नहीं। मुझे सिर्फ एक गिलास पानी दे दो।'

'लो, लो' उसने कहा और मेज पर पानी भरा गिलास रख दिया। इसके बाद वह कहवा का एक प्याला ले आया। 'क्यों ठीक है न ?' उसने आँखे चमकाते हुए कहा।

उसने काउंटर के नीचे से एक कागज़ का टुकड़ा और पेंसिल निकाली। 'मार्टिन, मैं तुम्हें एक चीज़ दिखाना चाहता हूँ', उसने कहा-'इसे देखो।'

एक लम्बी सूची थी। उसने पेंसिल मे मुँह से थूक लगा कर उससे एक लकीर खींची, फिर मन-ही-मन कुछ गणना करके उसने एक जोड़ लिख दिया। 'इसे देखो' उसने कहा।

कागज पर जोड़ ३० रुपया लिखा हुआ था। मै नहीं जानता था कि वह इस तरह लिखता जाता है। मैं नही कह सकता कि जब मैं उसकी दूकान से कहवा और बिसकुट और वर्जीनिया के लिए दूध ले जाया करता था तो उससे क्या आशा करता था। यह तो मैं जानता था कि वह सब मेरे हिसाब में

लिख लेगा। पर मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यह इतनी बड़ी रकम हो जायगी।

'हे ईश्वर! ३० रुपये!' मैंने कागज़ की ओर देखते हुए कहा। 'मुझे पता नहीं था कि इतनी बड़ी रकम हो गई होगी।'

हरमैन ने सिर हिलाया। उसके ओठों के कोने पर सदा मुस्कराहट रहती थी, जिससे यह कह सकना कठिन था कि उसके दिल के भीतर इस समय क्या भाव है। उसने कहा, 'देखो मैं कितनी कठिनाई में रहता हूँ। अब मेरा काम चल नहीं सकेगा। तुम कब तक दे दोगे?'

मैंने कुछ नहीं कहा।

जब मैं कहवा पी चुका तो उसने कहा, 'मार्टिन, अब मैं इससे अधिक हिसाब न चला सकूँगा।'

'कोई बात नहीं है,' मैंने कहा। 'चिंता मत करो, चिंता मत करो।'

उसने कतरा कर मेरी ओर देखा और कहा, 'अब मेरा काम चल नहीं सकेगा, ईमान से, चल नहीं सकेगा।'

मैं उसकी दूकान से बाहर निकल आया। बाहर ठढक थी।

इस बार मैं सीधा सड़क से होकर गली के भीतर चला गया। गली में अंधेरा छाया था। गली के किनारे चुने हुये दफ़्ती के बक्सों की महक मुझ तक आ रही थी। मैंने बक्स के भीतर किसी चूहे को खुदखुदाते हुये सुना। मैं टटोलता हुआ 'सी एन्ड डी स्टोर' की दीवाल के निकट पहुँचा। मेरे अँगूठे में ककरीट की जमीन की ठोकर लगी। इसी जमीन पर मैं दिया-

सलाई रगड़ कर जलाया करता था। इसके मानी थे कि मैं कोठरी के दरवाजे के निकट पहुँच गया था। वहाँ पहुँच कर मैंने दरवाजे के सूराख में आँख लगा कर भीतर देखा। कोठरी का थोड़ा-सा अंश, उसके आगे थोड़ा सा फर्श तथा एक काउंटर का थोड़ा-हिस्सा और 'सी एन्ड डी स्टोर' 'पसारी की दूकान' अंकित पीछेवाला साईन-बोर्ड दिखाई पड़ सका।

मैं चीड़ का एक बक्स रख कर उस पर चढ गया। वह बक्स हिलने लगा। मैं रूमाल से पेचकस थाम कर शीशे के दरवाजे का शीशा खोलने लगा।

शीशे का दरवाजा जैसे काँपने लगा और उसकी प्रतिध्वनि भीतर दूकान में भी गूँज उठी। मुझे पीछे, किसी इमारत की एक खिड़की खुलने का शब्द सुनाई पड़ा। मैं बड़ी देर तक साँस रोके प्रतीक्षा करता रहा। इसके बाद मैंने फिर शीशा खोलना शुरू किया।

इस बार शीशा चिटक गया। एक छोटा-सा टुकड़ा झन-झना कर जमीन पर गिर पड़ा। मैं फिर प्रतीक्षा करने लगा। वह शीशे का टुकड़ा मेरे मस्तिष्क पर इतनी जोर से झनझना कर टूटा कि उसके सामने नगर का सारा शोर-गुल लुप्त हो गया। टूटे हुये शीशे के दरवाजे से स्टोर के भीतर से, पावरोटी और चटनी की गंध से भरी हुई गर्म हवा आ कर मेरी नाक में घुस गई।

मैं फिर शीशा खोलने लगा। उसमें मैंने इतना बड़ा छेद कर लिया कि मेरा हाथ अंदर जा सके। मैंने कलाई भीतर डाल कर सिटकनी खोल दी।

मैं धीरे-धीरे दरवाजे पर धक्का देने लगा। पर वह हिलता तक नहीं था। तब मैंने एक जोर से धक्का दिया, पर ऐसा करने में बक्स हिल गया और मैं नीचे गिर पड़ा। मेरे गिरने से बहुत आवाज हुई। मैं चुपचाप बैठ कर एक हज़ार तक की गिनती गिनता रहा, पर इतने समय तक किसी के आने की आहट न मिली।

सम्भवतः मेरे जोर से धक्का देने पर दरवाजा ढीला पड़ गया था, क्योंकि दूसरी बार मेरे हाथ रखने पर वह सरलता से खुल गया।

मै पैर लटका कर बक्स से उतर, कोठरी में पहुँचा, और अत्यन्त सावधानी से कोठरी में रेंगता हुआ दूकान के भीतर पहुँच गया। अब मैं काउटरों के बीच था। दूकान के तीनों तरफ काउटरो की कतार थी। मैं काउंटर से पीठ लगा कर बैठ गया और सुस्ताने लगा। दूकान के दूसरे छोर पर खजाञ्ची की मेज पर जो बत्ती जल रही थी, उसकी रोशनी इतनी तेज थी कि मैं लकडी के खानों में चुने हुये डिब्बों के लेबिल पढ़ सकता था। मैं साबुन के बक्सों के पास बैठा था, कुछ सस्ते साबुनों की तेज़ गध मेरी नाक मे बस रही थी। मैं झुका हुआ दूसरी तरफ की कतार में बढा।

इसी समय मैंने दूकान में एक क्षीण आवाज सुनी। मैं साँस रोक कर सुनने लगा। मैंने पुनः वह आवाज सुनी। वह किसी चीज के काँपने की आवाज थी और दूसरे छोर से आ रही थी। मैंने देखा कि सामने एक विज्ञापन का पोस्टर हिल

रहा है। मैं रेंगता हुआ कोठरी की ओर पीछे हटने लगा। मेरी दृष्टि पोस्टर पर थी। वह अभी तक हिल रहा था।

सहसा पोस्टर गिर पड़ा और उसके पीछे से दूकान की चिरपरिचित काली बिल्ली अपनी पीठ क़मान की तरह बनाये तथा पूँछ हिलाती हुई मेरी तरफ बढ़ आई।

मैंने आँख ऊपर उठाई। शीशे के बड़े दरवाजे से सड़क के उस पार की इमारतों की रोशनी साफ दिखाई पड़ रही थी। एक मोटर अपनी चमकती हुई रोशनी के साथ सड़क से निकल गई।

मै अपनी जगह से हिल नहीं सका। मुझे ऐसा मालूम पड़ा कि कोई मशीनगन लिये हुये मुझे घूर रहा है। किसी भी क्षण दूकान के भीतर कोई आ सकता था।

मै धीरे-धीरे पीछे की तरफ रेंगने लगा। एक बार घुटने के बल खिसकने के लिये उठते ही मैंने सड़क पर एक आदमी को सिगरेट पीते हुये जाते देखा। मुझे उसकी सिगरेट का धुआँ तक साफ-साफ दिखाई पड़ रहा था। मैं सोचने लगा कि यदि किसी प्रकार पुनः यहाँ से भाग कर अंधकारमयी कोठरी मे चला जाऊँ तो समझूँ जान बची लाखों पाये।

इसी समय मुझे पावरोटी रखने की खाली टोकरियों की याद आई। मुझे मालूम था कि काउंटर के कोने में चार पाँच खाली टोकरियाँ हमेशा रखी रहती हैं। वे काफी बड़ी होती हैं और उनसे आड़ का काम ले सकता हूँ।

मैं उन खाली टोकरियों के पास पहुँच गया और इस बीच मैंने किसी को सड़क से पुनः गुजरते हुये नहीं देखा।

मैंने अत्यन्त सावधानी से एक-एक करके दो टोकरियाँ उतार लीं। मेरी दृष्टि दरवाजे की ओर ही बँधी थी। जब मैं किसी को उधर से गुजरते देखता तो रुक जाता और उसके निकल जाने की प्रतीक्षा करने लगता था। इस प्रकार बहुत धीरे-धीरे कर के मैं उन टोकरियों को उतार पाया। टोकरिया को उतार लेने के बाद मुझे कुछ आश्वासन हुआ कि इनकी आड़ करके मैं अपना काम कर सकूँगा।

मैंने अपनी आवश्यकता की चीज़ें बटोरनी शुरू कीं और गेहूँ, जौ, मटर, दूध, फलों के रस, पावरोटी के कई डिब्बे दो बार मे ले जाकर दोनों टोकरियों मे भर दिये। टोकरियाँ अधिक भारी नहीं थीं। मै आसानी से उन्हें ले जा सकता था और किसी को सदेह भी नहीं हो सकता था।

मै एक डिब्बा खिसकाने जा रहा था कि मैंने टोकरी के कोने से कोई चीज चलती हुई देखी। मैं घूम पडा और गौर कर के टोकरी के छेदों से देखने लगा। मैंने पुनः कोई चीज चलती हुई देखी। बाहर वाले शीशे के दरवाजे पर एक बाँह हिल रही थी। मैं अपना स्थान बदल कर पुनः उस बाँह पर गौर करने लगा। धीरे-धीरे मुझे एक स्पष्ट मूर्ति दिखाई पडने लगी। उसके चमकते हुये बटन, तथा टोप पर लिखे हुये 'सी ए० डी स्टोर्स' के अक्षरों से मैंने समझ लिया कि वह दूकान का पहरेदार डैनी है। वह बडे आश्चर्य से पावरोटी रखने की टोकरियों की तरफ देख रहा था। अगर मेरे मुँह के आगे टोकरी का आड़ न होता तो उसकी आँखे मुझे साफ देख सकती थीं।

मैं बैठ गया। मुझे सड़कों पर आदमियों के बोलने चालने तथा मोटरों के तेजी से निकल जाने की आवाज सुनाई पड़ने लगी।

मै समझ गया कि पिछवाड़े के खुले हुये दरवाजे को देख कर उसे सदेह हो गया है। मै कोठरी की तरफ खिसकने लगा। मैं चाहता था कि जल्दी से जल्दी कोठरी के दरवाजे के पास पहुँच जाऊँ, जिससे भागने में सुविधा हो।

मै धीरे-धीरे खिसकने लगा, परन्तु कोठरी के दरवाजे से कुछ फासले पर पहुँच कर रुक गया। कारण, डैनी की आँखें सीधे कोठरी के दरवाजे पर लगी थीं। मैं प्रतीक्षा करने लगा कि डैनी अपनी आँख हटाये तो मैं कोठरी में घुस जाऊँ।

इसी समय बाहर शोरगुल सुनाई पड़ा। कोई चिल्ला रहा था, 'पकड़ो-पकड़ो!' एक आदमी तेजी से भागता हुआ निकल गया। तभी मैंने डैनी को सीटी बजाते हुये सुना।

मैंने सिर उठा कर देखा। डैनी चला गया था।

मैं जल्दी से उठा और सामान से भरी हुई दोनों टोकरियाँ शीघ्रता से उठा कर गली में निकल आया। इसके बाद मैंने किसी ओर देखा तक नहीं, बस अपनी नाक की सीध में चलता चला गया।

चौराहे के निकट पहुँचने पर एक आदमी को अपनी ओर आते देखा। मैंने अपना सिर नीचा कर लिया और चलता रहा। वह आदमी आकर मुझसे टकरा गया और दूध के डिब्बे टोकरी से गिर पड़े। उन्हें उठाने के लिये मुझे टोकरी जमीन पर रखनी पड़ी।

उसने स्वयं दूध के डिब्बे उठा कर मुझे देते हुये कहा, 'लो, ये रहे!' उसकी आवाज बड़ी मीठी थी। तेज दौड़ने के कारण वह हाँफ रहा था।

'तुमने बड़ा बोझ लाद रखा है,' उसने कहा। मैं सिर हिला, कतरा कर आगे बढने लगा।

उसने कहा, 'तुमने देखा नहीं, एक चोर का पीछा किया जा रहा था। सी.ए० डी स्टोर के बगल मे फलों की जो दूकान है वहाँ से मैने एक आदमी को कुछ फल चुरा कर भागते देखा। मैने और पहरेदार ने उसका पीछा किया। पर वह भाग गया।

'अच्छा!' मैंने कहा।

'क्या मै भी तुम्हारा कुछ बोझ सम्हाल लूँ।'

मैने कहा, 'नहीं, धन्यवाद!'

उसने कहा, 'दुनिया में भी कैसे-कैसे आदमी होते हैं। मैंने उसका पीछा किया, पर वह भाग निकला। अच्छा, सलाम!'

वह सीटी बजाता हुआ एक ओर चला गया।

मैं घर पहुँचा।

जौ सो गई थी। वह चौंक कर जाग पड़ी और मुझे घूरने लगी।

'मार्टिन!' उसने कहा।

'देखो, क्या-क्या लाया हूँ।' मैंने कहा।

मैंने सब डिब्बे निकाल-निकाल कर मेज पर चुन दिये। मैं हँसने लगा और पीठ पर हाथ बाँध कर कमरे में टहलने लगा। इसके बाद मैंने जाकर जौ को गोद में उठा लिया और

उसका चुम्बन किया। जौ हँसने लगी, पर उसने मेरी ओर आँखें नहीं की।

इसके बाद वह डिब्बे उठा-उठा कर देखने लगी, जैसे पसारी के यहाँ से खरीद कर लाये गये हों। प्रत्येक डिब्बे को देख-देख कर उसके मुँह से निकल जाता था, 'ओहो! ओहो!'

हमने उबले हुये मसालेदार चने का एक डिब्बा खोला। चने के दाने गोल-गोल और बड़े-बड़े थे, मैंने रोटी का एक टुकड़ा तोड़ा, उसका आटा महीन और खूब सफेद था।

'मुझे तो बड़ी जोर से भूख लगी है,' मैंने कहा।

जौ ने, स्टोव जला दिया और घर में जो थोड़े से बर्तन थे, उन्हें निकाल लाई।

भोजन तैयार करते हुये जौ ने एक बार मेरी ओर देखा, और कहा, 'तो सब कुशल से बीता, मार्टिन!'

'हाँ,' मैंने कहा। 'पर मुझे तो बड़ी जोर से भूख लगी है।'

'तो आओ बैठो,' जौ ने कहा।

जौ जाकर वर्जीनिया को जगा लाई। वह गहरी नींद में सोई थी। खाने की इतनी तश्तरियाँ देख कर वह रोने लगी और फिर बिस्तर पर जाकर लेट गई।

'सचमुच का खाना है बेटी!' जौ ने कहा, 'तुम सपना नहीं देख रही हो। आओ मैं तुम्हारा मुँह धो दूँ।'

हमने बड़ी देर तक खाना खाया और उसके बाद कहवा का गर्म प्याला पिया। खाना खा कर मै पेट पर हाथ फेर रहा था कि किसी ने दरवाजा खट-खटाया।

मैंने जौ से कहा, 'सब तश्तरियाँ खाट के नीचे छिपा दो।'

मैंने अत्यन्त सावधानी से दरवाजा खोला। देखा, लारी खड़ा था। तब मैंने पूरा दरवाजा खोल दिया।

'ओहो! लारी! आओ, आओ!' मैंने कहा।

लारी ने आते ही कहा, 'काफी रात बीत गई है। पर मैंने तुम्हारे कमरे में बत्ती जलते देख कर सोचा, चलो देख आऊँ, क्या हो रहा है।'

उसने कमरे में चारों ओर दृष्टि दौड़ाते हुये कहा, 'मालूम पड़ता है आज बड़ी देर में खाना खाया?'

मेज पर दो दियासलाई के बक्स पड़े थे, जिन पर 'सी एन्ड डी स्टोर' का लेबिल लगा था। मैंने जल्दी से आगे बढ़ कर उन्हें प्लेट से ढक दिया। मुझे पता नहीं कि लारी की उस ओर दृष्टि गई या नहीं, परन्तु जब मैंने घूम कर देखा तो वह वर्जीनिया से बातें कर रहा था। मैंने उसे कहते हुये सुना, 'क्यों, खूब पेट भर खाया?'

वर्जीनिया बतलाने लगी कि आज उसे कैसी-कैसी बढ़िया चीजें खाने को मिली हैं।

लारी ने कहा, 'वाह, तब तो खूब रही।' इसके बाद उसने मेरी ओर घूमकर कहा, 'वाह, मार्टिन! आज तो तुमने खूब हाथ साफ किया।'

जौ लारी की ओर देख रही थी। उसने कहा, 'क्यों लारी, क्या कहवा पीओगे?'

उसने कहा, 'अवश्य। मैं यही कहनेवाला था।' इसके बाद मुझसे कहा, 'क्यो मार्टिन, तुम आनन्द पूर्वक घूम आये?'

लारी की बोली में कुछ विचित्रता थी जिससे मुझे संकेत मिल गया। मुझे याद आया कि जब मैंने उससे विदा ली थी तो उसने किस विचित्र रीति से मेरी ओर देखा था—वह कितना परेशान दिखाई पड़ता था। अब मुझे सब स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा। शीशे के दरवाजे से डैनी का झाकना, शोर-गुल मचना, किसी का तेजी से भागते हुये जाना, डैनी का दरवाजे से हटना और मेरा दूकान से निकल कर भागना !

'हाँ लारी, मै आनन्दपूर्वक घूम आया', मैंने कहा, 'इसके लिये तुम्हे धन्यवाद !'

लारी ने भौंहें सिकोड़ ली और गम्भीर मुद्रा बना ली। उसने जौ की ओर देखा, फिर मेरी तरफ देखते हुये सिर हिला कर बोला, 'इसका क्या मतलब ?'
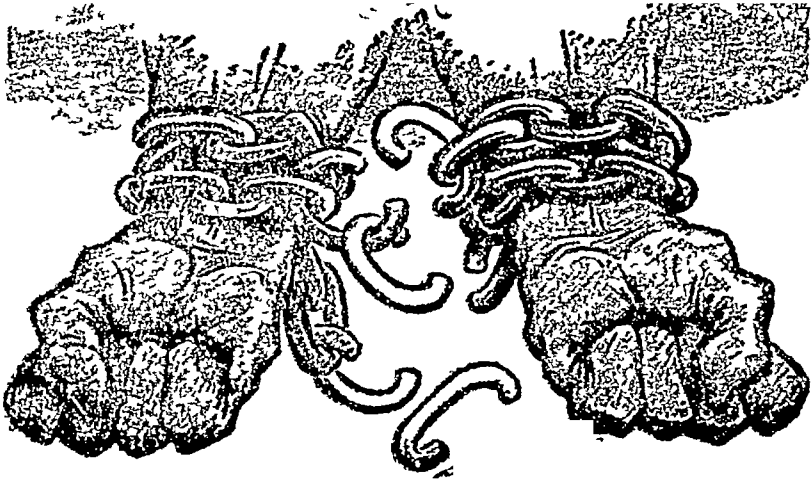
अपराधी

ब्लाडीमीर में एक नवयुवक सौदागर इवन मीट्रिच एक्स-ओनी रहता था। उसके पास दो दूकानें और एक मकान था। मीट्रिच बड़ा सुन्दर था। उसके बाल कोमल और घूँघरदार थे। वह बड़ा ही हँसमुख और सगीत-प्रिय था। जब वह बिलकुल नवजवान था, उसे शराब पीने की आदत थी। अधिक नशे में रहने से वह दङ्गा-फसाद कर बैठता, पर जब उसकी शादी हो गई तो उसने शराब पीना छोड दिया, फिर भी कभी-कभी पी लेता था।

गर्मी के दिन थे। एक दिन वह निज़नी के मेले में जा रहा था, किन्तु जब वह अपने परिवार से बिदा होने लगा, उसकी स्त्री ने रोक कर कहा—"मीट्रिच, आज यात्रा न करो। मैंने एक दुःस्वप्न देखा है।"

"तुम डरती हो,"—मीट्रिच ने हँसकर उत्तर दिया—"मैं मेले में शराब पीकर बेहोश रहूँगा ?"

"मेरे भय का कोई स्पष्ट कारण नहीं है"—उसकी स्त्री ने कहा—"मै केवल यही जानती हूँ कि मैने एक बुरा स्वप्न देखा है। मैंने स्वप्न मे देखा है कि तुम शहर मे जब लौटकर आए हो, तो जब तुमने अपनी टोपी उतारी है, तुम्हारे बाल भूरे दिखाई पड़ते थे।"

वह हँस पड़ा। कहने लगा—"यह तो भाग्यवानो की निशानी है। इस बार देखना, मै अपनी सब चीज़ें बेच आऊँगा।"

उसने फिर घरवालो से बिदा ली और चल पड़ा।

जब वह आधा मार्ग तै कर चुका, उसकी एक पूर्व परिचित सौदागर से भेट हो गई। दोनों एक ही सराय मे ठहरे और कुछ चाय पीने के बाद पास के कमरों में सो रहे।

मीट्रिच की आदत अधिक देर तक सोने की नहीं थी। वह सवेरे उठा और कोचवान को गाड़ी तैयार करने की आज्ञा दी। उसने सराय के मालिक को अपना किराया चुका दिया और शीघ्रतापूर्वक मेले की ओर बढ़ने लगा।

जब वह पचास मील जा चुका तब अपने घोड़ों को खिलाने के लिए ठहरा। अपने लिए सरायवाले से भोजन गरम करने की आज्ञा दी और अपना इसराज़ लेकर बजाने लगा।

वह बाजा बजा रहा था उसी समय एक सरकारी गाड़ी सराय के दरवाजे पर आकर रुकी। उसमें से एक आफ़िसर

और दो सैनिक उतरते दिखाई पड़े। वे सीधे मीट्रिच के पास आकर पूछने लगे-"तुम कौन हो। कहाँ से आए हो ?"

मीट्रिच ने भलमन्सी से कहा-"बैठो, चाय वगैरह पीओ।"

किन्तु वे प्रश्न करते ही जा रहे थे-"तुमने पिछली रात कहाँ बिताई है ? तुम अकेले ही थे या और भी सौदागर साथ मे था ? तुम सवेरे उस सौदागर से मिल आए हो ? तुम इतने सबेरे क्यों चल पड़े ?"

आफिसर ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी। मीट्रिच आश्चर्य से अवाक् रह गया। वह इन प्रश्नों का मतलब ही न समझ सका। उसने पिछले सराय की सब बात कह दी और उसने पूछा-"तुम मुझसे इतने प्रश्न क्यों कर रहे हो ? क्या मैं चोर या डाकू हूँ मैं रोज़गार के लिए यात्रा करता हूँ। तुम्हें मुझसे ऐसे प्रश्न नहीं करने चाहिये।"

"मैं पुलिस आफिसर हूँ"—उसने अपने सैनिकों को सकेत कर कहा—"जिस सौदागर के साथ तुमने पिछली सराय मे रात बिताई है उसकी वहाँ हत्या हो गई है। मै तुम्हारी तलाशी लूँगा"—कह कर वह सब कमरे मे घुस पडे। उसके बिस्तर खोल कर देखे जाने लगे। यकायक एक थैले मे एक छुरी दिखाई पड़ी। उनमे से एक चिल्ला उठा—"यह देखो।"

मीट्रिच ने देखा, उसमे खून लगा हुआ था। वह डर गया।

आफिसर ने पूछा—"इसमे खून क्यों लगा है ?"

मीट्रिच की बुरी हालत थी। बड़े प्रयत्नो के बाद वह धीरे से कह सका—"मैं तो नहीं जानता। यह मेरी नहीं है।"

आफिसर ने अपने क्रोध को प्रगट न करके कहा—"आज सुबह वह सौदागर अपने बिस्तरे पर मरा हुआ मिला है। उसका गला छुरी से अलग किया गया है। यह तुम्हारा ही काम है। उसका कमरा भीतर से बन्द था। वहाँ दूसरा तो कोई था नहीं। तुम्हारे थैले में खून लगी छुरी मिली है और तुम्हारी शक्ल और व्यवहार तुम्हे खूनी बतलाते हैं। तुमने उसे कैसे मारा है और कितने रुपये चुराये हैं, वता दो।"

मीट्रिच ने कसम खाई—"यह मेरा काम नहीं है। मैने चाय पीने के बाद सौदागर को नहीं देखा। छुरी मेरी नहीं है।" पर उसकी आवाज रुक गई, चेहरा पीला पड़ गया। वह सचमुच अपराधियो की भाँति काँप रहा था।

पुलिस आफिसर ने उसे कैद करने की आज्ञा दी। उसने कहा—"इसे शीघ्र गाड़ी मे डाल लो और चलो।"

एक्सिओनी मीट्रिच के पैरों मे वेड़ी डाल दी गई। उसके रुपये और बिक्री के सामान सब ले लिए गए। वह गाड़ी में बिठा दिया गया। सब उसे लेकर चल पड़े। मीट्रिच इस अनहोनी से कातर होकर रोने लगा।

वह पास के नगर के जेलखाने मे पहुँचा दिया गया।

पुलिस ने ब्लाडीमीर मे उसके चाल-चलन का पता लगाया। सब लोगों ने कहा—"वह पहले तो शराब पीकर घूमा करता था पर अब एक नेक आदमी की तरह रहता है। वह बुरा आदमी नहीं है।"

पर उस पर मुकदमा चलाया गया। उस पर सौदागर के खून करने और बीस हजार रुपये चुराने का जुर्म था।

उसकी स्त्री बड़ी व्याकुल थी। क्या बात थी? इसका उसे पता न था। उसके बच्चे अभी नादान थे। उनमें से एक तो अभी उसकी गोद में था। वह अपने पति से मिलने गई। बड़ी मुश्किल से उसे आज्ञा मिली। उसने वहाँ देखा कि उसके पति के हाथों में हथकड़ी पड़ी है और वह चोरों और हत्यारों के बीच पड़ा है। वह मूर्छित होगई। बच्चे रोने लगे, तब उसे होश हुआ। उसने बच्चों को सभाला और मीट्रिच से बातें करने लगी। उसने पूछा—"तुम पर यह विपत्ति कैसे आई?" मीट्रिच ने सब बात बतला दी। उसकी स्त्री बड़ी दुःखित हुई। उसने पूछा—"मैं क्या करूँ?" मीट्रिच ने कहा—"तुम ज़ार के पास एक प्रार्थना-पत्र भेजो, जिससे उसे पता चले कि कैसे एक निरःपराधी मनुष्य जेल की यातना भोग रहा है।"

उसकी स्त्री ने कहा—"देखो, मेरा स्वप्न असत्य नहीं था। तुम्हें उस समय नहीं चलना चाहिये था।" उसने अपने पति के सिर पर हाथ रख कर कहा—"प्रिय, सच बता दो, तुमने खून नहीं किया है?" मीट्रिच की आँखों में आँसू आ गये। उसने भरे गले से कहा—"तुम्हें मेरा विश्वास नहीं?" अपनी स्त्री के अविश्वास से जैसे वह चकित हो उठा।

उसी समय सतरी ने आकर उन सबको चले जाने को कहा। मीट्रिच अपने परिवार को टूटे हुए दिल से देख रहा था।

मीट्रिच ने एक ठंढी साँस ली और सोचा, सत्य केवल भगवान् जानते हैं। उसी की शरण में शीतल छाया है।

उसने फिर अपनी मुक्ति के लिए कोई चेष्टा नहीं की। कोई आशा भी नहीं थी। वह केवल ईश्वर को स्मरण करता रहा।

मीट्रिच को बेत लगाए गए जिससे उसके शरीर पर कितने ही घाव हो गए। उनके अच्छे होने पर वह साइबेरिया भेज दिया गया।

वह छब्बीस वर्ष तक वहाँ कैद रहा। उसके बाल बर्फ की तरह सफेद हो गये। उसकी दाडी लम्बी-लम्बी, पतली और भूरी हो गई। उसका शरीर आगे को झुका मालूम पड़ने लगा। वह धीरे-धीरे चलता, कम बोलता और उसकी हँसी तो गायब ही हो गई।

जेल मे उसने जूते बनाने सीख लिए थे जिससे उसे कुछ मिल भी जाता था। उसने एक 'सन्त की जीवनी' खरीद ली। वह प्रकाश रहते तक उसे पढता। रविवार को गिरजे मे जाता और वहाँ अपनी प्रार्थना करता। उसके साथी उसका आदर करते थे। जेल कर्मचारियों से जब उन्हे कोई प्रार्थना करनी होती तो मीट्रिच ही उनका प्रतिनिधि होता और जब वे आपस मे झगड़ बैठते तो उनका पच बनता। सध्या को जब वे सब एकत्रित होकर बैठते तो नये कैदियों से उनकी अपराध कथा सुनते।

नये कैदियों मे एक लम्बा बूढा किन्तु दृढ़ आदमी था। उसकी छोटी भूरी दाढी थी। उसने कहा—"भाई, मैंने एक गाड़ी के घोड़े चुराए, मैं पकड़ा गया। केवल घर जाने के लिए मैंने ऐसा किया था, फिर मैं इसे छोड़ देता और इसका कोचवान भी तो मेरा मित्र है! इसलिए मैंने अपराध नही किया है। किन्तु मुझे दण्ड मिला। हाँ—मैंने इसके पहले एकबार अपराध किया था, उसके ही लिए मुझे यहाँ आना चाहिए था।"

"तुम कहाँ के रहने वाले हो ?" एक ने पूछा।

"ब्लाडीमीर का—मेरा कुटुम्ब अब भी वहीं रहता है।" उसने कहा--"मेरा नाम सेमिओनिच है।" मीट्रिच ने उसकी बात सुनकर अपना सिर उठाया और उससे पूछा--"क्या तुम ब्लाडीमीर के सौदागर एक्सिओनी को जानते हो ? वे लोग अब तक जीते हैं ?" वह उत्सुकता से उसके उत्तर सुनने को प्रस्तुत था।

"मैं उनको अवश्य जानता हूँ। उनके घर के लोग बड़े अमीर हैं किन्तु एक्सिओनी मीट्रिच साइबेरिया मे सजा भोग रहे हैं।" उसने धीरे-धीरे कहा, फिर रुक कर पूछा—"और आप यहाँ कैसे आये हैं ?"

एक्सिओनी अपने दुःख की कहानी कहना पसन्द नहीं करता था। उसने एक ठढी साँस भरी और कहा—"मै अपने अपराधों के कारण यहाँ छब्बीस वर्ष से पड़ा हूँ।"

"कैसा अपराध था ?" उस बुड्ढे कैदी सेमिओनिच ने पूछा।

एक्सिओनी ने फिर भी इस प्रसङ्ग को टाल दिया। किन्तु उसके साथियों ने सारा समाचार कह सुनाया कि कैसे यह फँस कर इस कष्ट को झेल रहे हैं।

सेमिओनिच जब उस घटना को सुन रहा था, तब उसने कई बार एक्सिओनी मीट्रिच की ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। उसे जैसे उसको देखने मे भय मालूम पड़ता था। सारी घटना सुन कर चिल्ला उठा—"आह ! आश्चर्य है ! अच्छा हुआ कि हम सब एक जगह मिल गये।"

एक्सिओनी को इन बातो को सुनकर सन्देह हुआ कि यह उस सौदागर के खून करनेवाले को जानता है, इसलिए उसने उससे पूछा—"सेमिओनिच, तुमने इस घटना को सुना था या तुमने मुझे कही और भी देखा है?"

"ओह"—सेमिओनिच ने कहा—"यह समाचार तो उस समय सारे देश मे फैल गया था किन्तु आज इसे बहुत दिन हुए, अब तो मै इस घटना की सारी बाते भूल गया हूँ।"

"क्या तुमने यह भी सुना था कि असली हत्याकारी कौन था"—एक्सिओनी ने पूछा, "जिसके थैले मे छुरी निकली थी?" सेमिओनिच ने हँस कर कहा—"चाहे भले ही किसी और ने छुरी उसके थैले मे डाल दी हो। किन्तु उसे हत्याकारी कौन कहेगा? फिर उस थैले को अपने सिर के नीचे रखकर तुम सो रहे थे, कोई कैसे उसमे छुरी डाल सकता है? तुम उठ न जाते?"

एक्सिओनी को उसकी बात से विश्वास हो गया कि उस सौदागर का हत्याकारी यही आदमी है। इसीसे वह शीघ्र ही वहाँ से हट गया। उस रात उसे नींद न आई। उसका दुःख और भी बढ गया। कितनी स्मृतियाँ उसके हृदय मे कोलाहल उत्पन्न कर गई। उसे फिर एक बार अपने पुराने जीवन का स्मरण हो आया। सारी घटनाएँ आदि से अन्त तक उसकी आँखों के सामने स्पष्ट हो गई। विदा के समय स्त्री की सुन्दर करुण मुखाकृत, छोटे बच्चों का प्रसन्न-हास्य तथा उस अन्तिम सराय मे उसकी चपल अँगुलियों से आलोड़ित इसराज के स्वर झंकार, एक एक कर याद आने लगे। लड़कपन से

लेकर इस निरीह वृद्धावस्था तक की सारी स्मृतियाँ उसे मथने लगी। आत्म-ग्लानि की तीव्र व्यथा से वह अभिभूत हो उठा।

एक्सिओनी का धैर्य विचलित हो उठा। उसने सोचा—"इस नीच के कर्तव्य से ही इस सजा को भोग रहा हूँ। इसके प्राण लेकर फाँसी पर चढ जाना भी अनुचित न होगा।" उसके मन मे शान्ति थी ही नही। कई दिन उसे इसी तरह बिताने पड़े। वह किसी से न मिलता और न कही जाता था।

एक रात जब वह जेल मे टहल रहा था उसने देखा कि जहाँ कैदी सोए हुए हैं वहाँ की मिट्टी नीचे से ऊपर झर रही है। वह कुछ देर खड़ा वहाँ सोच रहा था कि इसका क्या कारण है। किन्तु उसी समय सेमिओनिच अपने कमरे मे से बाहर निकल आया और उसने कहा—"एक्सिओनी! देखो मैं अपने निकलने के लिए मार्ग तैयार कर रहा हूँ। तुम भी इससे बच सकते हो किन्तु यदि तुमने इसका भेद खोल दिया तो मुझे बेत लगेंगे, किन्तु मैं भी तुम्हें मार डालूँगा।"

"मै बाहर नहीं जाना चाहता।" एक्सिआनी ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"और तुम्हें मुझे मार डालने की आवश्यकता भी नहीं है क्योंकि यह कार्य तुमने छब्बीस वर्ष पहले ही कर लिया है। पर, तुमको मुझसे चिंतित होने की आवश्यकता नहीं", कह कर वह चला गया।

दूसरे दिन जब कैदी बाहर काम करने चले गये तो एक सिपाही ने सेमिओनिच की उस करतूत को देखा जो उसने मिट्टी हटाकर की थी। उसकी जाँच शुरू हुई। पर किसी ने

भेद नहीं बतलाया। जो जानते थे, वे भी चुप रह गये। क्योंकि यह तो सभी जानते थे कि मालूम होने पर सेमिश्रोनिच का प्राण बेंतो की मार से निकाल लिया जायगा। गवर्नर ने अन्त मे एक्सिश्रोनी से पूछा, क्योकि वह उसे एक सच्चे आदमी के रूप मे जानता था।

सेमिश्रोनिच चुपचाप खड़ा था जैसे उससे कुछ सम्बन्ध ही नहीं। एक्सिश्रोनी के होठ और हाथ काँपने लगे। वह बड़ी देर तक कुछ न बोल सका। उसने सोचा, "जिसने मेरा जीवन नष्ट कर दिया उसे मै क्यो क्षमा करूँ? जो कुछ कष्ट मैने उठाया है उसका प्रतिफल वह भोगे। भेद खोल देने पर कोड़ो की मार से उसके प्राण ले लिए जायँगे। अच्छा, यदि मेरा सन्देह असत्य हो? तब मुझे क्या मिलेगा?" वह काँप उठा।

गवर्नर ने पूछा—"बूढे, सच बता दो, वहाँ गढा कौन बना रहा था?"

एक्सिश्रोनी ने सेमिश्रोनिच की ओर देखकर कहा—"महाशय, मै नहीं कह सकता, भगवान की आज्ञा भी नहीं मालूम पड़ती कि मैं कुछ कह सकूँ। आप जो चाहें करें, मैं आपके हाथ मे हूँ।"

गवर्नर ने बड़ा प्रयत्न किया। किन्तु एक्सिश्रोनी ने कुछ कहा ही नहीं। वह जाँच वहीं समाप्त हो गई। सेमिश्रोनिच पूरा भला आदमी बना रह गया।

उस रात को जब एक्सिश्रोनी सोने जा रहा था, एक आदमी धीरे से आकर उसके बिस्तर पर बैठ गया। वह

सेमिश्रोनिच था। एक्सिश्रोनी ने पूछा, "अब तुम मुझसे क्या चाहते हो ?" सेमिश्रोनिच का गला भर आया था। वह कुछ कह न सका। एक्सिश्रोनी उठ बैठा और कहा—"ठीक बोलो, तुम क्या चाहते हो ? नहीं तो मैं अभी पहरे के सिपाही को आवाज देता हूँ।" सेमिश्रोनिच ने उसकी तरफ झुक कर धीरे से कहा—"भाई, मुझे क्षमा करो।"

एक्सिश्रोनी ने कहा—"क्यों ?"

"जिसने सौदागर की हत्या की, और तुम्हारे थैले में छुरी छिपा दी थी, वह मै ही था।" सेमिश्रोनिच ने अपनी गर्दन झुका कर कहना शुरू किया—"मैंने तुम्हारी हत्या के लिए भी सोचा था किन्तु उसी समय बाहर से एक आवाज सुन पड़ी, इसलिए मैंने थैले मे छुरी छिपा दी और खिड़की की राह बाहर निकल भागा।"

एक्सिश्रोनी चुपचाप बैठा सुन रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे ? सेमिश्रोनिच अब नीचे बैठ कर अपना सिर पीट रहा था। वह कह रहा था—"मीट्रिच मुझे क्षमा करो। मैंने सौदागर की जान ली है यह शपथ खाकर कहूँगा। तुम्हें छुट्टी मिल जायगी। तुम अपने घर जाओ।"

मीट्रिच ने कहा—"ऐसी वाते करना आसान है। मैंने तुम्हारे लिए छब्बीस वर्ष कष्ट उठाये हैं, अब मैं यहाँ से कहाँ जाऊँ ? मेरी स्त्री मर गई होगी और बच्चे मुझे भूल गए होंगे।"

सेमिश्रोनिच पृथ्वी से न उठा। वह अपना सिर उसी तरह पीट रहा था। कहता था—"मुझे क्षमा करो। जब कर्मचारियों

ने मुझे कोड़ों से पीट कर क्षत-विक्षत कर दिया था, तब भी मुझे इतना कष्ट नहीं हुआ, जैसा कि आज तुम्हें देख कर हो रहा है। भगवान् के लिए मुझे क्षमा कर दो"—कह कर वह रोने लगा।

एक्सिओनी ने जब उसे रोते देखा तो वह भी रोने लगा। उसने कहा—"भगवान् तुम्हे क्षमा करेंगे।" उसे कारागार छोड़ने की जरा भी इच्छा नही थी। वह मौत की बाट जोह रहा था।

एक्सिओनी ने सेमिओनिच का भेद नही खोला किन्तु सेमिओनिच ने अपना अपराध स्वयं स्वीकर कर लिया। कैदखाने से छूटने की जब आज्ञा मिली उसके पहले ही एक्सिओनी मर चुका था।

वह....

हम सात थे। एक ऐतिहासिक नगर का अवशेष देखने के लिए, प्रातःकाल चार बजे घर से चले थे। घोड़ा-गाड़ी अब ढालू पहाड़ी मार्ग तय कर रही थी।

पूर्व क्षितिज पर उदित होते सूर्य की प्रथम किरणें कुहासे के झीने आवरण को उठाने का प्रयत्न कर रही थीं। रात-भर खूब ओस पड़ी थी। चारो ओर छाई हरियाली पर उसके छोटे-छोटे कण, नव-रश्मियो के ससर्ग से सुनहरे होकर, अत्यन्त सुन्दर लगते थे।

'वाह, क्या मौसम है!'—कहकर हमारे पासवाली महिला ने उनीदी आँखे खोली और एक आलस-भरी अँगड़ाई ली।

इस सुन्दर प्रातःकाल मे जब हमारे साथी जागे तो उनके चेहरे नींद की ख़ुमारी से उतरे हुए थे और उन्हें देखकर तबियत कुढ़ गई।

तभी सामने खेत में घास के झुरमुट से निकल, अपने लम्बे-लम्बे कान फैलाए एक सुन्दर खरगोश चौकड़ी भरता दिखाई पड़ा। सब उसे देखने के लिए उत्सुक हो उठे।

आसमान की स्वर्णिम छटा दिन की तेज़ी मे घुलने लगी। कोहरा स्पष्ट होने लगा। गन्तव्य स्थान पर पहुँचने मे अभी देर थी।

तब तक समय काटने के लिए कोई चर्चा आवश्यक थी।

विंसेण्ट सुन्दर चित्रकार है। जवानी के दिनों में उसने कितने प्रेम-सरोवरों में डुबकी लगाई है। सुगठित शरीर, माँसल भुजायें, सुन्दर मुख, तब, सहज ही लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो जाता था। अब उसके मुँह पर घनी सफेद दाढी है। आखे उतनी सुन्दर नहीं, पर उनमें बीती रसिकता की कहानी कोई पढ़ ले।

सब लोगो की राय हुई कि वह अपनी कोई प्रेम-कहानी सुनावे। पहले तो उसने ना-नू की, परन्तु फिर बहुत कहने-सुनने पर राज़ी हो गया।

उसने कहना आरम्भ किया:—

"तब मैं पच्चीस वर्ष का था। मुझमे अथाह उत्साह था। नित्य नई-नई कल्पनाओं के हाट मे घूमा करता। एकाएक तबियत हुई कि पर्यटन करूँ। चित्रकारी के सिवाय आनन्द की भी सामग्री मिलेगी।

'इस प्रकार पैदल घूमना बड़ा सुखद है। रेलगाड़ी की तेज़ी में वह आनन्द कहाँ। जब मन चाहा, विश्राम किया, जब चाहा, चले। कहीं सुन्दर जल-प्रपात दिखाई पड़ा, ठिठककर उसी को देखने लगे। सौरभ से लदे समीरण का रस लूटा। एकान्त कभी अनुभव ही नहीं होता। गाओ, दौड़ो, तुम्हें अपने से छुट्टी ही न मिलेगी। फिर पेड़-पौधे, जङ्गली जानवर—ये सब साथी नहीं तो और क्या हैं?

'दिन-भर की थकन के पश्चात् रात अत्यन्त आकर्षक प्रतीत होती है। किसी गाँव की झोपड़ी की छाया में, रूखा-सूखा

भोजन कितना स्वादिष्ट लगता है! हरी घास का बिछौना घर से अधिक स्पृहणीय होता है।

'हाँ, तो मैं दो शैलमालाओं के मध्य में स्थित एक गाँव में पहुँचा। वहाँ एक ही सराय है। सराय की स्वामिनी ने कुछ अनमने भाव से मेरा स्वागत किया। बाद को मालूम हुआ कि नवागन्तुकों के प्रति उसका व्यवहार ऐसा ही होता है। उसका नाम था लूनी।

'क्या मुझे एक कमरा मिल सकता है?' मैंने नम्रतापूर्वक उससे पूछा।

'हाँ-हाँ! आप ख़ुद देखकर पसन्द कर लें, तो अच्छा होगा।'

'एक कच्चे फ़र्श पर मैंने अपना असबाब रख दिया। थोड़ी देर में पलङ्ग, कुर्सी, मेज़ तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ नौकर रख गए। कमरे की खिड़की से सामने रसोई-घर की धुएँ से काली दीवारें दिखाई पड़ती थीं। उसी के पासवाले दालान में बैठ, सब लोग भोजन करते थे। मुँह-हाथ धोकर मैं बाहर गया।

'रसोईघर में चूल्हे पर एक काला भद्दा बटुआ चढ़ा था। सराय की स्वामिनी वहीं एक कुर्सी पर बैठी थी।

'क्या और भी कोई अतिथि है?'—मैंने उससे पूछा।

'हाँ-हाँ! एक अंग्रेज़ महिला हैं, कुमारी हेमा। दूसरे नम्बर के कमरे में ठहरी हैं।'—उसने अप्रतिभ होकर उत्तर दिया।

'पाँच सोस (फ्रान्सीसी सिक्का) दे, वहीं दालान में बैठ, सब के साथ भोजन करने का अधिकार मैंने पा लिया।

'खाना खाकर मैं शराब ले रहा था कि एक नवीन वस्तु ने मेरा ध्यान आकर्षित किया।

'भोजनशाला से खिंचा हुआ, सेव के पेड़ों तथा पुष्पों से पूर्ण, तारों से घिरा हुआ, एक विस्तृत मैदान था। लकड़ी के चक्करवाला दरवाज़ा, जिसमें से केवल आदमी आ-जा सकते हैं, एक कोने में छिपा-सा था। एकाएक मेरी दृष्टि उधर जा पडी। वहाँ, मैंने एक महिला को आविर्भूत होते देखा। उसका सम्पूर्ण शरीर एक लाल शाल से आवृत था। अगर शाल से बाहर लकटते हुए हाथों में सफेद छतरी न होती, तो यह बताना कठिन था कि उसके हाथ हैं या नहीं। वह अत्यन्त क्षीण थी। मस्तक पर घुँघराले केशों की लटे बिखर रहीं थी। इससे उसके मुँह पर सौन्दर्य का आभास आ गया था। बुद्धि ने कहा—'यही हेमा है।'

'उस दिन शाम तक फिर मैंने उसे नहीं देखा।

'दूसरे दिन जब घाटी की कोमल दूर्वा पर बैठा चित्र-कारी कर रहा था, तब मैंने उसे देखा। पर वह मुझे देखते ही भाग गई। दोपहर में, भोजन करने बैठा तो उसका परिचय प्राप्त करने को उत्सुक हो उठा। नम्रता-पूर्वक मैंने उसकी भोजन की थाली उसके सामने खिसका दी, गिलास मे पानी भर दिया! पर तब भी वह अवाक् बैठी रही। केवल एक बार बिना मेरी ओर देखे, क्षीण स्वर मे उसने कहा, 'धन्यवाद!'

'तीन दिन में मैं उसके विषय में बहुत-कुछ जान गया। कोई रमणीक स्थान खोजती हुई, लगभग छः मास पूर्व वह वहाँ

आई थी। अभी उसके जाने के कोई लक्षण न थे। वह अल्प-भाषिणी थी। भोजन करते समय ही दिखाई पड़ती, अन्यथा दिन-भर अपने कमरे में अकेली बैठी, धार्मिक पुस्तके पढा करती। धर्म-प्रचार के लिए वह कभी-कभी पीले परचे बाँटती। गाँववालों मे वह सर्व-प्रिय न थी। एक किसान ने घृणा के स्वर मे उसके विषय मे बड़े इत्मीनान से कहा था—'वह नास्तिक है!' उसके विषय मे अनेको धारणाएँ प्रचलित थी। कोई कहता—'वह एक लक्षाधीश की पुत्री है, एकान्तवास कर रही है। क्यो? घरवालों ने निकाल दिया होगा? नास्तिक है, इसीसे।'

'सच पूछिए तो वह उन असख्य नारियों में से थी, जो देश-देश मे प्युरिटन-धर्म का प्रचार किया करती हैं और मैं ऐसी औरतो से घृणा करता था। पर न मालूम कौन अज्ञात शक्ति मुझे उसकी ओर घसीटे लिए जा रही थी। शायद कौतूहल!

'सराय की स्वामिनी भी उसकी निन्दा किया करती थी—'उस पर प्रेत की छाया है, हाँ, प्रेत की छाया! तभी तो······।' और उसके यह शब्द सुनते ही मुझसे हँसी रोके न रुकती थी।

'क्या कर रही हैं वह आज?'—मैंने हँसते-हँसते पूछा।

'आप मेरा विश्वास करेंगे·· ··?' बात पूरी होने से पहले वह खिलखिला पड़ती!—'आज एक मेढक की टाँग मे चोट लग गई। उसने उसकी मलहम पट्टी की है। जैसे ' और हँसी के अतिरेक के कारण उसके मुँह से शब्द ही न निकलते। प्रकृतिस्थ होने पर वह फिर कहती—'एक बार समुद्र-तट पर

वह...

घूमते हुए मैंने मछली खरीदी, उसे फिर पानी
लिए। मछलीवाले का दाम मिल गया था पर
खूब गालियाँ दीं, जैसे उसके हाथ से बल-पूर्वक मछली छीना
गई हो। 'क्यों साहब, क्या उस पर प्रेत की छाया नहीं है?"—
इतना कहते-कहते लूनी फिर हँसी से खिल उठती।

'वह बहुधा पेड़ों के झुरमुट के आस-पास घूमा करती। एक बार सन्ध्या के समय दोनों घुटने टेके, पृथ्वी पर बैठी वह कुछ प्रार्थना कर रही थी। नव-पल्लवों के अन्तराल में कोई लाल चीज़ देख, कौतूहल-वश मैं उधर बढ़ा। वह हेमा थी। वह मुझे देखते ही भाग गई। जाते-जाते उसने सहमे नेत्रों से मुझे निहारा, जैसे चोरी करते पकड़ी गई हो।

'कभी, जब कि घाटी में बैठा, मैं अपने कार्य में व्यस्त होता, वह उत्तुङ्ग पर्वत-शिखा पर खड़ी दिखाई पड़ती। अस्ता-चल-गामी रवि की स्वर्णिम किरणों से रंजित समुद्र की फेनिल लहरों को वह एक-टक निहारती होती। मुख प्रदीप्त, हाथ-पैर निश्चल; जैसे कोई पाषाण-प्रतिमा खड़ी हो।

'एक उमङ्ग, एक उत्साह में मेरे दिन कट रहे थे। ग्राम के सहज-सौंदर्य से अधिक हेमा ने मेरा मन आकर्षित कर लिया था।

'मैं अपनी नवीनतम कृति को हर्षोत्फुल्ल हो निहार रहा था, मन में अनेकों भावनाएँ उठ रहीं थी। कल्पना-भरी नई-नई अभिलाषाओं का द्वार खुल रहा था। चाहता था, सम्पूर्ण विश्व मेरी कला को तृषित नेत्रों से निहारे और इसी उन्माद में मैंने चित्र को मार्ग में जाती, एक गाय को भी दिखाया था।

'ख़ैर, वह तो गाय थी, पर लूनी भी, उस चित्र को देखकर विशेष प्रसन्न न हुई। यह देख, मेरे मन में इतना क्रोध उत्पन्न हुआ कि . . . ।

'तभी हेमा उधर से निकली। वह सम्भवतः अपनी इच्छा को सवरण न कर सकी। रुक कर चित्र देखने लगी।

'यह मेरी नवीनतम कृति है।'—शिष्टता-पूर्वक मैंने उसे बताया।

'उल्लसित नेत्रों से चित्र को निहारती हुई, हर्ष से खिल-कर उसने कहा—'ख़ूब! महोदय, आप की तूलिका के स्पर्श से यह चित्र सजीव हो उठा है।'

'अपनी प्रशसा सुन कर मैं कुछ लजा गया।

'जब मैं भोजनशाला में पहुँचा तो वह वहाँ बैठी थी। मुस्कराकर उसने मेरी ओर निहारा। मैं उसके पार्श्व में जाकर बैठ गया।

'ओह, प्रकृति-सुन्दरी भी कितनी मनोहारिणी-कितनी अनुपम है!' उसने कहा।

'मैं मन्त्र-मुग्ध-सा उसे देखता रहा। उस दिन सन्ध्या को हम दोनों साथ-साथ घूमने गए।

'वह दिन अत्यन्त मनोरम था। पर्वत-शिखा पर पहुँचते-पहुँचते मन बिलकुल हल्का हो गया। चलते थे तो प्रतीत होता था, जैसे हवा में उड़े चले जा रहे हों। पुष्पों के सौरभ से लदा पवन अग-अग को छूकर एक गुदगुदी-सी पैदा कर रहा था।

'हेमा एकटक समुद्र की ओर निहारने लगी।

'प्रतापी सूर्य, जिसकी ओर कभी कोई आँखें उठाकर भी न देख सकता था, अब निस्तेज हो गया था। देखते-देखते, ग्लानि एव पश्चात्ताप के गर्त में डूबे, किसी अपराधी की भाँति, वह सागर के अक मे गिर पड़ा। चौथाई, आधा, फिर सम्पूर्ण—वह लाल बिम्ब क्रमशः जल-मग्न हो गया। तब दिशाएँ रक्त के आँसू बहाने लगीं।

'दूर क्षितिज के निकट एक जहाज था। रवि की अन्तिम उच्छ्वासों से वह लाल अगारे की तरह चमक उठा।

'उन्मत्त हेमा बालको की भाँति किलकारी मारकर बोली—'ओहो, देखो, कैसा सुन्दर दृश्य है। काश! मैं चिड़िया होती, और आकाश में उड़ी-उड़ी फिर सकती।'

'उसके नेत्रों में पानी भर आया था। सुनहले आकाश की आभा उसके मुख पर चमक उठी। उस समय मुझे वह एक अनिन्द्य सुन्दरी प्रतीत हुई। वह मूर्त्ति जैसे मेरी आँखों में बस गई।

'हेमा ने चित्रकारी पर चर्चा छेड दी। रग, भाव, रेखाएँ—आदि सभी आवश्यक विषयों पर जब मैं व्याख्यान देने लगा तो एकाग्र-चित्त वह मुझे इस प्रकार निहारती रही, जैसे मेरे एक-एक शब्द को पी जाना चाहती हो। यदा-कदा वह कह उठती—'हाँ, हाँ, मैं समझ रही हूँ। वास्तव में इस कला मे सजीवनी-शक्ति है।'

'दूसरे दिन मुझे देखते ही वह मित्र-भाव से मुस्कराई। हम परस्पर हाथ-में-हाथ डाले घूमने गए।

'मुझे मालूम हुआ कि वह एक सुशील महिला है। भावोद्रेक में उत्तेजित हो उठना, यही उसकी त्रुटि है। वयस प्राप्त कर लेने पर भी अविवाहित रहनेवाली युवतियों में यह रोग समान होता है। किसी कुतिया के बच्चे को अपनी माँ का दूध पीते देख, अथवा घोंसले मे चिड़ियों के बच्चों को चहचहाते देख, वह भावुकता में एकरस हो, अन्दर-ही-अन्दर काँपने लगती। जैसे उसमें केवल शिराये हैं, रक्त-माँस नहीं।

'प्रातःकाल के साथ ही, चित्रकारी के लिए आवश्यक सामग्री ले, मै अकेला चला जाता था—गाँव से दूर किसी निर्जन घाटी मे। अब वह भी मेरे साथ जाती। मार्ग में प्रायः निःशब्द रहती। उसकी आकृति से आभास मिलता, जैसे वह अपने भीतर किसी से लड़ रही है, प्रयत्न करने पर भी कण्ठ से स्वर फूटता ही नहीं।

'एक दिन उसने साहस कर कहा—'आज्ञा हो तो एक दिन पास बैठ, आपको चित्र बनाते देखूँ।'

'इतना कहते-कहते वह लाल हो गई जैसे कोई लज्जाजनक प्रस्ताव किया हो।

'मैंने प्रसन्नतापूर्वक कहा—'हाँ-हाँ!'

'निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच, जब मैं रंग का बक्स ले, कन्वास पर झुक गया तो वह मेरे निकट ही खड़ी, किसी भोले बालक की भाँति आँखें फैला, तूलिका की प्रत्येक गति निहारती रही।

'थोड़ी देर बाद 'धन्यवाद' कह, सहसा वह भाग गई। शायद उसे संशय था कि उसकी उपस्थिति मेरे कार्य की प्रगति में बाधक होगी।

वह...

'कुछ दिनों पश्चात् उसकी यह हिचक दूर हो गई। फोल्डिंग स्टूल बग़ल में दबा, वह नित्य मेरे साथ आती और उसी पर बैठकर मेरे हाथों की गति निहारा करती। कहीं रंग गहरा, कहीं कम और चित्र सजीव; तब वह उल्लसित स्वर में चिल्ला उठती—'खूब!'

'वह मुझे श्रद्धास्पद समझती। उसकी दृष्टि में मैं एक देवता था। प्रकृति का सजीव चित्रण करने में कुशल था, शायद इसी लिए। मेरी कृतियों को वह किसी धर्म-ग्रन्थ की भाँति आदरणीय मानती।

'कभी-कभी वह मुझसे ईश्वर-चर्चा करती। उसका ईश्वर एक प्रकार का कल्पित व्यक्ति था, जिसमें कोई विशेष शक्ति अथवा बुद्धि नहीं। नित्य प्रति बढते पापों से क्षुब्ध, शायद उसके मन ने स्वीकार कर लिया था कि वह इन पापों को रोक नहीं सकता, उसमें इतनी शक्ति नहीं।

'वह ईश्वर के कर्त्तव्य में विश्वास करती और एक साधारण मनुष्य की भाँति कहा करती थी—'ईश्वर ने हमें यह आज्ञा दी है, ईश्वर ने हमें यह आज्ञा नहीं दी है; ईश्वर की यही इच्छा थी, ईश्वर की इच्छा न थी,' इत्यादि। वह अन्तःकरण से मुझे ईश्वरवादी बनाने का प्रयत्न करती। कई बार, जेब मे, हैट मे, अथवा जूतों में मैंने उसके पीले परचे पाए थे, जिनमे ऐसे ही विचार अंकित होते।

'हम लोगों की घनिष्ठता मित्रता में परिणत हो गई थी। कुछ दिनों पश्चात् मुझे मालूम हुआ कि मेरे प्रति उसका व्यवहार बदल रहा है। इस परिवर्त्तन का कारण मै न जान सका।

'जब मै घाटी अथवा और किसी निर्जन स्थान में बैठा, अपने कार्य में व्यस्त होता तो वह हाँफती हुई मेरे पास आती। उसके हृदय की तीव्र धड़कन मुझे स्पष्ट सुनाई पड़ती, जैसे वह दौड़ती हुई आई हो, अथवा उसके भीतर कोई लड़ रहा हो। उसके गालों की लाली विलीन हो जाती, मुँह पीला पड़ जाता। धीरे-धीरे वह प्रकृतिस्थ होती।

'कभी जब मै बातचीत के प्रवाह मे तन्मय होता, वह सहसा कुछ कहते-कहते रुक जाती, और लम्बे-लम्बे डग रखती हुई भाग जाती। तब मुझे सशय होता कि कहीं मैंने तो कोई ऐसी बात नही कह दी, जिससे इसके हृदय पर चोट लगी हो।

'मुझे विश्वास करना पड़ा कि हेमा का स्वभाव ही ऐसा है। पहले सकोच के आवरण मे रह, अपने को छिपाए थी।

'बहुत घूमने के बाद वह सराय मे लौटती थी। हवा से उसके सॅवारे हुए केश बिखर जाते, कपड़े अस्त-व्यस्त हो जाते। पहले वह ऐसी ही अवस्था में मेरे कमरे में चली आती थी, अब वह सज-धज कर ही मेरे पास आती। एक दिन मैने मुस्करा कर कहा—'हेमा, आज तुम बहुत सुन्दर लगती हो', षोड़शी की भाँति उसके कपोल अरुण हो गए।

'फिर, उसने मुझसे मिलना छोड़ दिया। मैं समझा था, कुछ दिनो पश्चात् यह उदासीनता हवा हो जायगी, पर मेरी धारणा गलत साबित हुई। अब मैं बोलता तो वह इस तरह घबराकर उत्तर देती, जैसे मुझसे दूर भागने के लिए वह उत्सुक हो। मैंने उससे पूछा भी—'हेमा, क्या नाराज हो ? तुम पहले जैसी नहीं रहीं, क्या मुझसे कोई अपराध हुआ है ?'

वह...

'नहीं-नहीं !' उसने विनय के स्वर में उत्तर दि
झूठ बोलते हैं, एकदम झूठ। मैं जैसी थी, वैसी हूँ।'

'वह एक विचित्र प्रकार से मुझे ताकती, जैसे कोई निरःपराधी फाँसी के तख्ते पर चढते समय किसी को निहारे। उन आँखों मे एक पागलपन, एक भयानकता होती, जैसे उसने अपने भीतर किसी की हत्या की हो। ··· हाँ, एक भाव और होता, जिसे कहने मे मै असमर्थ हूँ।

'मैं एक और चित्र मे तल्लीन था। विषय था—ढालू नाला जिसके दोनो कूल पर हरे वृक्षों से आवृत्त पर्वत-श्रेणी—जो दूर जाकर कुहासे में जैसा कि सूर्योदय के समय घाटियों पर छाया रहता है—अदृश्य हो जाती हैं। इस दूर कुहासे को ग़ौर से देखो, मनुष्य-छाया स्पष्ट होगी। कोई उर्द्ध-मुख युवती एक युवक की आँखों मे निहारती हुई और प्रातःकालीन अग्रगामी स्निग्ध प्रकाश कुहासे को वहन करता हुआ। यह मूर्तियाँ आगे बढ़ती प्रतीत होती थीं, जिससे चित्र का सौन्दर्य कई-गुना हो गया था।

'मेरी तूलिका बड़े वेग से चल रही थी। सामने ही वह दृश्य था, जिसे मैं कन्वास पर उतारना चाहता था। सहसा दूर ढाल पर कुछ उठता दिखाई पड़ा। वह हेमा थी। मुझे देखते ही वह भागने को उद्यत हुई, पर मैने उच्चस्वर से पुकारा—'हेमा, हेमा ! यहाँ आओ। तुम्हें एक चित्र दिखाऊँ।'

'वह अप्रतिभ होकर मेरे निकट आई, और एकटक चित्र देखने लगी। देखती रही और देखती रही, फिर चीख़ने लगी।

आँखें सावन-भादों बन गईं। ओह, कब तक पलकें उन हृदय-बेधी आँसुओं को अपने में छिपाए रहतीं !!

'मैं भी द्रवित हो गया। समशोक के अतिरेक में, उसके हाथ अपने हाथ मे ले, उन्हें प्यार से दबाया। उसका अणु-अणु काँप रहा था, जैसे उनकी सम्पूर्ण शिराये एक साथ बज रही हों। दूसरे क्षण वह छिटक कर मुझसे दूर हो गई।

'स्त्री का एक रूप होता है, जो सदा हृदय-विमोहन है। हेमा का छिटकना मेरी आँखों में बस गया। सान्त्वना का एक शब्द भी न कह पाया था कि वह भाग गई। मैं स्तम्भित था, जैसे कोई स्वप्न देखा हो।

'उस दिन दोपहर को मैंने भोजन नहीं किया। वहीं एकात मे निर्जीव-सा पड़ा रहा। मन कभी रोने को चाहता था, कभी हँसने को। मेरी अवस्था हास्यास्पद होने पर भी दयनीय थी। मुझे मालूम पड़ता था, जैसे पागल हो जाऊँगा।

'अब क्या करूँ ?'—मैंने अपने से पूछा। 'बस ग्राम छोड़, कहीं और चले जाने के सिवाय और कोई मार्ग नहीं।' मन ने उत्तर दिया।

सन्ध्या-भोजन मे हेमा भी सम्मिलित हुई थी। आँखे नीची किए चुपचाप भोजन करती रही, मेरी ओर एक बार देखा तक नहीं।

'देखो, अब मैं जाऊँगा !' मैंने सराय की स्वामिनी की ओर निहार कर कहा।

वंह...

'सराय की स्वामिनी विचलित हो, कहने लगी—
किसलिए आप हमे छोडकर जाएँगे ! आपने हमारे दिल मे घर कर लिया है। अब हमे निराशा देगे ?'

'कनखियों से मैंने हेमा का मुँह देखा। वहाँ कोई भाव-परिवर्तन न हुआ। हाँ सराय की नौकरानी अचकचाकर मुझे एकटक देखने लगी। वह निरीह बाला मुझसे बहुत हिल गई थी। एकान्त मे मैं कभी-कभी उसके कपोलों को चूम लिया करता था,—केवल इसीलिए।

'भोजन के पश्चात् मैदान मे जा, मैं धूम्र-पान करने लगा। दिन की घटना को स्मरण कर, मैं विचलित हो उठा। कितनी ही कल्पनाएँ मुझे उलझा रही थीं। मैं अपना ओंठ चूसने लगा, जैसे उस पर किसी ने चुम्बन अंकित किया हो। धमनियों मे रक्त सञ्चार तीव्र हो उठा।

'वृक्षों के नीचे काली छाया फेकती हुई रजनी आई। तभी नौकरानी चिड़िया-घर का दरवाजा बन्द करने के लिए उधर से निकली। पद-शब्द छिपाने के लिए अँगूठों के बल दौड़कर मैं उसके पास गया। दरवाज़ा बन्द कर, वह मुड ही रही थी कि मैंने उसे बाहु-पाश मे आबद्ध कर लिया और उसके मुँह पर चुम्बनों की भरमार कर दी। खीझने का अभिनय करती हुई, वह छूटने का प्रयत्न करने लगी। पर आँखे, कपोल—उसका सम्पूर्ण शरीर प्रसन्नता का आभास दे रहा था।

'सहसा वह मेरे अंक-पाश से अपने को छुड़ाकर भाग गई। मुझे लगा, जैसे कोई पीछे खडा है। वह हेमा थी। शायद वायु-

व ˊकर, लौट रही थी। निस्पन्द नीशीथ में हमारी छाया देख, वह ठिठक गई थी। दूसरे क्षण वह अन्धकार मे विलीन हो गई।

'लज्जावनत मैं अपने कमरे मे आया। मालूम पड़ता था, जैसे सब मज्जा-तन्तु बिखर गए हों। रात-भर मैं बिस्तर पर तड़-पता-सा रहा। कितने विचार मस्तिष्क को उथल रहे थे। कभी लगता, कोई चिल्ला रहा है, कभी कोई धीरे-धीरे आ, मेरे कमरे का दरवाज़ा खोल रहा है। प्रभात के सुखद-शीतल समीर का स्पर्श होने पर मुझे नींद आई। तब मैं बिल्कुल थक गया था।

दोपहर को जब खानेवाली मेज पर बैठा, तब भी चित्त शान्त न था। कुछ निश्चय न कर पाया था कि क्या करूँ! हेमा वहाँ न थी, इसलिए हम सब उसकी प्रतीक्षा में बैठे रहे। जब वह न आई तो सराय की स्वामिनी जाकर उसके कमरे में झाँक आई। वह वहाँ न थी। प्रातःकाल सूर्योदय देखने के लिए वह नित्य-प्रति पर्वत-शिखर पर जाती थी। प्रायः वह समय पर न लौटती। उसकी अनुपस्थिति कोई आश्चर्य की बात न थी। हम लोगों ने भोजन आरम्भ कर दिया।

'उस दिन बड़ी गर्मी थी। हम सब खुले मैदान में सेव के पेड़ की छाया मे बैठे थे। बेचारा नौकर पानी देते-देते बेदम-सा हो गया। ओह! उस दिन कितनी प्यास थी।

'एक तश्तरी में कुछ फल आए। पानी से भीगकर ये अधिक स्वादिष्ट हो जायेंगे, यह विचारकर मैंने नौकरानी से कहा—'ज़रा कुएँ से थोड़ा ठढा पानी ले आओ।'

'वह कुछ देर बाद घबराई हुई लौटी। बोली—'आज कुएँ में न मालूम क्या हो गया। लोटे मे पानी भरता ही नहीं।'

वह..

'इसका कारण जानने के लिए लूनी उधर गई। लौटकर उसने कहा—'मुझे तङ्ग करने के लिए पड़ोसी लोग अकसर कुएँ मे लकडी का लट्ठा डाल देते हैं। शायद आज फिर किसी ने यही शरारत की है।'

'मेरी इच्छा हुई—देखूँ क्या बात है।

'कुएँ पर जा, झुककर मैंने उसमे झाँका। कुछ सफेद-सफेद दिखाई पड़ता था, पर यह न समझ मे आया कि क्या है। और सब लोग भी कौतूहलवश वहाँ आ गए। मेरे प्रस्ताव पर रस्सी मे बाँध, लालटेन कुएँ मे लटकाई गई। उसकी पीली किरणो मे कुएँ की भद्दी दीवारे दृष्टि-गोचर हुई। लालटेन एक स्थल पर रुकी। हम लोगों ने कुएँ मे झाँक कर देखा। पर कोई विशेष आकृति न दिखाई पड़ी। बस, कुछ काला-सुफेद-सा दिखाई पड़ता था।

'घोड़ा है!'—नौकर चिल्लाया—'मुझे उसके खुर साफ दिखाई पड़ते हैं। ससुरा कल अँधेरी रात मे गिर पड़ा होगा।'

'सहसा एक विचार ने मुझे कँपा दिया। पानी के बाहर जूते पहने हुए दो पैर दिखाई पडे थे। मेरा हाथ काँपने लगा। लालटेन हिल उठी।'

'अस्फुट स्वर मे मैं बुदबुदाया—'कुछ और है। · कहीं ·· वह।'

'नौकर तो मुँह बाए खडा रहा, पर लूनी और नौकरानी—दोनों चिल्लाती हुई भाग गई। पर शव तो निकालना ही होगा। मैंने नौकर की कमर मे रस्सी बाँधी। फिर, रस्सी गड़ाड़ी पर

चढ़ा, उसे कुएँ में उतारा,। उसके एक हाथ में लालटेन थी, दूसरे मे रस्सी। कुछ देर पश्चात् जैसे धरती में से आवाज़ आई—'ठहरो !'

'कुएँ मे झाँककर देखा—नौकर पानी में कुछ टटोल रहा है। क्षण-भर बाद वह चिल्लाया—'ऊपर खींचो।'

'मैंने उसे खींचना आरम्भ किया। हाथ काँप रहे थे। धैर्य साथ छोड़ रहा था। तबियत चाहती थी, रस्सी छोड़कर भाग जाऊँ।

'क्या है ?'—नौकर को बाहर निकलते देखकर मैंने पूछा।

'नौकर ने अपने हाथ वाली रस्सी गड़ाड़ी पर चढाई और हम दोनों ने उसे खींचना आरम्भ किया।'

'लूनी और नौकरानी दीवार की आड़ में खड़ीं, हमारी ओर निहार रहीं थी। कुएँ से दो टाँगें बाहर निकलते देख, वे चिल्लाती हुई भाग गई। नौकर ने लाश खींचकर बाहर निकाली। हेमा ही थी। मिट्टी और खून जम जाने के कारण उसका चेहरा भयानक हो उठा था।

'नौकर ने अवरुद्ध कण्ठ से कहा—'बेचारी ने कूदकर जान दे दी।'

'हम दोनों ने शव लाकर कमरे में रक्खा। पानी से उसका मुँह धोते समय हाथ पलकों पर पड़ गए। वे पथरीले नेत्र जैसे स्वय खुल कर मुझे देखने लगे। ओह, शव की वे दो भयानक आँखे ! मेरा रोम-रोम काँप गया। जैसे-तैसे मैंने उसकी पलकें बन्द कर दीं।

वह...

'फिर हम लोगों ने शव के गीले वस्त्र उतारे। शरीर मे हड्डियाँ-ही-हड्डियाँ दिखाई पड़ती थी। छाती बिलकुल सपाट थी; मास का नाम नही। हाथ-पैर खूब पतले-पतले!

'सुगन्धित दूर्वा तथा पुष्पो से शव ढाँक दिया गया। गीले वस्त्रों मे एक पत्र मिला। उसमें लिखा था—'मुझे इसी ग्राम मे स्थान दिया जाय।' उसका आशय जान, मै भयभीत हो उठा।

'सन्ध्या होते-होते शव को देखने के लिए इकट्ठा हुई भीड़ क्रमश. विलीन हो गई। एकान्त पाकर मेरे रोम-रोम मे दया एव करुणा भर आई। मोमवत्ती के प्रकाश मे, मैं घण्टों वह मुँह निहारता रहा। आह, वह निरीह नारी! कैसे उसका शैशव बीता होगा? कहाँ से आई, कैसे आई और कहाँ चली गई? उस निर्जीव शरीर मे कौन अन्तर्वेदना थी, जो वह जन-ससर्ग से दूर रह एकान्त-वास कर रही थी?

'ऐसे दयनीय प्राणी इस ससार में न मालूम कितने होगे! इस रमणी पर प्रकृति ने इतना अत्याचार क्यों किया? अपने जीवन मे उसने क्या पाया और अब उसके लिए क्या शेष रहा? वह ईश्वर में कितना विश्वास करती थी!

'अब उसका शरीर फिर धरित्री में मिल जायगा। सम्भवतः उस स्थान पर कोई पेड फूले, फल निकले, चिडियों के लिए अन्न पैदा हो और वह अन्न उदर मे जा, शरीर का कोई भाग बने। पर उसकी आत्मा? क्या वह सदा उसी अँधेरे कुएँ में क़ैद रहेगी?

'ऐसे ही विचारों मे कई घण्टे बीत गए। पूर्व मे सफेदी फूट निकली। बाल-रवि की प्रथम किरणों ने हेमा का चुम्बन लिया। प्रकाश से कमरा जगमगा उठा। पक्षियो के कलरव ने अवसान के आगमन का संदेश दिया।

'मैंने कमरे की सब खिड़कियाँ खोल दीं; जिससे सम्पूर्ण विश्व उस निर्जीव, निर्दोष शरीर को देख ले। उसके स्मृति-रूप, मैने उसके बालों का गुच्छा काट कर अपने पास रख लिया और एक चुम्बन—एक आवेश-पूर्ण चुम्बन—उसके अछूते अधरों पर अङ्कित कर दिया।"

चित्रकार नत-मस्तक हो, चुप हो गया सब की आँखो में आँसू भर आए थे। कोचवान ऊँघ रहा था। चाबुक की मार न खाने के कारण घोड़े धीरे-धीरे चल रहे थे। गाड़ी भारी हो उठी थी—शायद शोक के भार से।
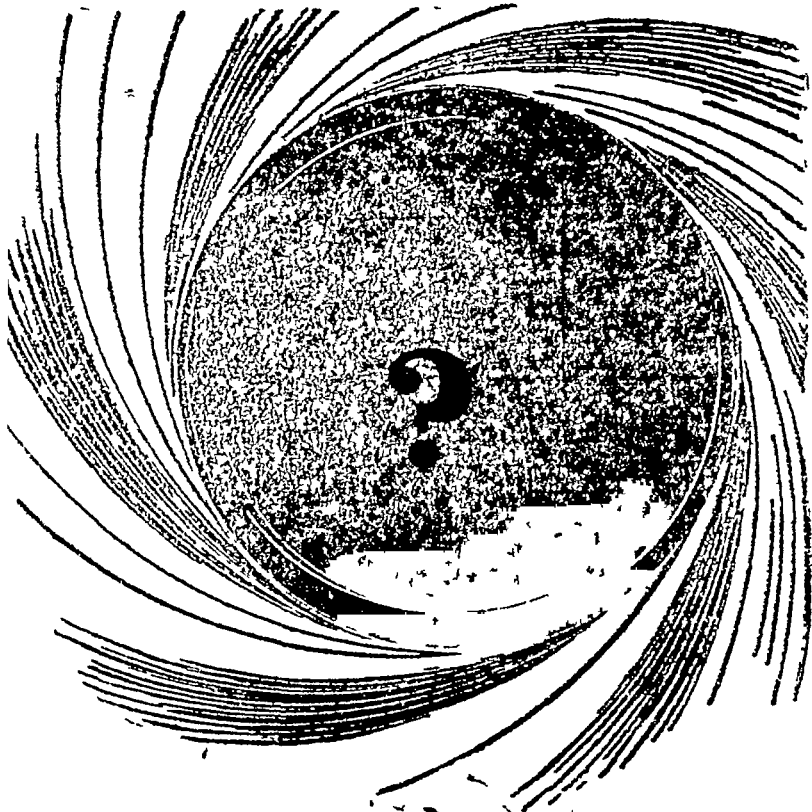
क्या से क्या

पति की छोटी-सी आय पर गृहस्थी किसी प्रकार चल रही थी। विवाह के उपरान्त दो सन्तानें भी उत्पन्न हुई थीं। प्रारम्भ में ही गृहस्थी पर ऋण का जो बोझ लद गया था उसके कारण उस परिवार में दरिद्रता ने घर कर लिया था। फिर भी, सम्भ्रात होने के कारण, वह परिवार अपनी दरिद्रता पर किसी प्रकार

परदा डाले था और समाज मे अपनी लज्जा प्रगट न होने देने के लिए ऊपरी टीम-टाम बनाए था ।

हेक्टर का लालन-पालन गाँव मे, अपने जमीदार पिता के मकान पर हुआ था । एक बूढा पादरी उसका शिक्षक था । वे अमीर नहीं थे, फिर भी किसी प्रकार अमीरी का ढोग बनाए थे ।

जब उसकी अवस्था बीस बरस की हुई तो प्रयत्न कर के उसे नौकरी दिला दी गई और सवासौ मासिक वेतन पर उसने नौसेना के दफ्तर मे क्लर्क के रूप मे प्रवेश किया । उसने अपनी जीवन-नौका, एक अकुशल नाविक की भाँति—जिसे ससार-सागर मे भयानक लहरों से सग्राम करने का अभ्यास नही होता, जिसमे सघर्ष करने की एक विशेष बुद्धि और एक विशेष शक्ति नही होती और जो बिना किसी शस्त्र के सघर्ष के मैदान मे ढकेल दिया जाता है—एक चट्टान से टकरा दी ।

आफिस मे उसके प्रारम्भिक तीन वर्ष बड़ी दयनीय अवस्था मे बीते । पिता के कितने ही मित्रों से उसका परिचय हो गया था । उन पर भाग्यदेव की कृपा नही थी और इस प्रकार के बिगड़े रईसो का एक मुहल्ला ही बस गया था । इस मुहल्ले मे वह कई परिवारों से परिचित हो गया था ।

वे सब आधुनिक जीवन से अपरिचित, ईश्वर-भीरु और अभिमानी थे । वे मकानों की ऊपरवाली मज़िलों मे रहते थे । इन सब मकानों पर एक निर्जीवता छाई रहती थी । इन मकानों के सभी किराएदार कुलीन घरानों के थे फिर भी धन का सर्वत्र अभाव था ।

युग-युग की रूढियों, अपने वश की मर्यादा और उससे च्युत न होने की चिन्ता ने इन परिवारों को ग्रस्त कर रक्खा था। कभी इन परिवारों मे वैभव लोटता था, परन्तु पुरुषों की जड़ता ने सब-कुछ नष्ट कर दिया। हेक्टर का परिचय इसी समाज की एक नवयुवती से हो गया जो उसी के समान कुलीन घराने की और निर्धन थी और उसने उससे विवाह कर लिया।

चार वर्ष के भीतर उनके दो सन्ताने हुई।

इन चार वर्षों में, दरिद्रता से पीड़ित होने के कारण इस परिवार को इतवार के दिन बाजार की सैर कर आने तथा यदा-कदा किसी सहयोगी की कृपा से पास मिल जाने पर शाम को थिएटर देख आने के अलावा प्रतिदिन के नीरस जीवन-पथ से हट कर चलने का और कोई अवसर नही मिला था।

भाग्य से इस साल, दफ्तर के बडे बाबू की कृपा से क्लर्क को कुछ अतिरिक्त काम मिल गया और इसके लिये उसे चालीस रुपया पारिश्रमिक मिला।

जिस दिन वह यह रुपया अपने घर लाया, उसने अपने स्त्री से कहा—'प्रिये, इस बार कुछ नवीन आयोजन किया जाय। उदाहरण के लिये बच्चों को लेकर यात्रा की जाय।'

और बहुत वाद-विवाद के बाद यह निश्चय हुआ कि वे शहर के बाहर एक बगीचे मे जा कर वही दिन बितायेगे और भोजन करेंगे।

'वाह, बडा मनोरञ्जन रहेगा,' हेक्टर ने खुशी से उछल कर कहा, 'और एक बार जहाँ आदत पड़ गई, मैं तुम्हारे लिए

श्रौर बच्चों के लिए गाड़ी कर लिया करूँगा। मैं स्वयं किराए पर घोड़ा ले लिया करूँगा। घोड़े की सवारी मेरे स्वास्थ्य को भी लाभ पहुँचायेगी।'

उस सप्ताह भर वे प्रस्तावित उद्यान-विहार की ही चर्चा करते रहे।

प्रतिदिन शाम को जब हेक्टर आफिस से घर लौटता तो अपने बड़े लड़के को गोद मे उठा लेता श्रौर उसे टाँगों पर बिठा कर जोश के साथ उचकाते हुए कहता—'देखो, अगले इतवार को दादा इसी तरह घोड़े पर सवार हो कर सैर करने के लिए चलेंगे।'

श्रौर वह छोटा बालक दिन भर कुर्सियों के हत्थे पर चढ़ कर उन्हें कमरे मे इधर से उधर घसीटता हुआ, चिल्लाया करता—'देखो, दादा घोड़े की सवारी कर रहे हैं।'

श्रौर घर की नौकरानी भी अपने स्वामी की ओर सराहना की दृष्टि से निहारती हुई सोचती थी कि मैं भी गाड़ी पर साथ जाऊँगी श्रौर भोजन के समय हेक्टर अपनी घुड़सवारी का, पिता के मकान पर के अपने अनोखे करतबो का जो वृत्तान्त सुनाया करता था, उसे वह बड़े ध्यान से सुनती थी।

हेक्टर बड़े उत्साह के साथ बतलाता था कि उसने एक स्कूल मे घुड़सवारी की शिक्षा प्राप्त की है। जहाँ एक बार घोड़े की पीठ पर बैठ गया, फिर उसे किसी बात का भय नहीं रहता।

वह अपने दोनो हाथ मलते हुए अपनी पत्नी से कहा करता था—'यदि मुझे ज़रा तेज़ घोड़ा मिल गया तब तो फिर

क्या कहना है। तुम देखना मै कैसी घुड़सवारी करता हूँ। अगर तुम्हारी इच्छा होगी तो हम लोग लौटते समय बाज़ार से होकर आएगे। उस समय सब लोग थियेटर से लौटते होगे। उस समय हम लोगों का ठाट रहेगा, यदि आफिस का कोई मिल गया तो उस पर भी रङ्ग जम जायगा। तुम समझ लो कि अफसरो पर प्रभाव डालने का इससे बढकर और कोई उपाय नहीं हैं।'

नियत दिन पर, गाड़ी और घोड़ा, दोनों साथ ही दरवाज़े पर आ कर खड़े हो गए। वह उसी समय अपने घोड़े की परीक्षा करने के लिए नीचे उतर आया। उसने घुड़सवारी के लिए अपने पैजामे मे चमड़े की गद्दी सिलवा ली थी और रात को एक चाबुक भी ले आया था। इस समय वह चाबुक उसके हाथ मे था और वह उसे हवा मे नचा रहा था।

उसने एक-एक करके घोड़े के चारों सुम देखे, उसकी गर्दन, उसकी छाती और उसके पुट्ठे टटोल कर देखे, उसका मुँह खोल कर उसके दाँत देखे और बतलाया कि उसकी उम्र कितनी है और जब सारा परिवार नीचे उतर आया तो उसने घोड़ों के सम्बन्ध मे और विशेष कर इस घोड़े के सम्बन्ध मे एक छोटा-सा भाषण दिया।

जब सब लोग गाड़ी मे बैठ गए तो उसने जीन के पट्टों की परीक्षा की और इसके बाद रकाब पर पैर रख कर चढ़ गया और घोड़े की पीठ पर एक प्रकार से गिर पड़ा। घोड़ा पिछले पैरों पर खड़ा होकर नाचने लगा और अपने सवार को एक प्रकार से जीन से उतार दिया।

हेक्टर सङ्कट में पड़ गया। उसने पुचकार कर जानवर को शान्त करने की चेष्टा की।

'बस, बेटे, बस। शान्त हो जाओ, शान्त हो जाओ।'

जब घोड़ा शान्त हो गया और वह भी स्थिर हो कर बैठ गया, तब उसने पूछा, 'सब लोग तैयार ?'

एक स्वर से सब ने उत्तर दिया:—'हाँ'

तब उसने आज्ञा दी, 'अच्छा चलो।' और तब वह दल चल पड़ा।

सब की दृष्टि उसी पर जमी थी। वह जानबूझ कर घोड़े की पीठ पर खूब उचक-उचक कर चल रहा था। जीन पर गिरते ही वह फिर उचक जाता था। मालूम पड़ता था कि वह जैसे घोड़े की पीठ पर नहीं, बल्कि हवा पर सवार था। कभी-कभी मालूम पड़ता था कि वह इस बार घोड़े की गर्दन पर गिरने वाला है। वह एकटक दृष्टि से सामने की ओर देख रहा था। उसके चेहरे की नसे तनी थीं, गाल पीले थे।

छोटे लड़के को अपने घुटने पर बिठाए उसकी पत्नी तथा बड़े लड़के को अपने घुटने पर बिठाए उसकी नौकरानी दोनों अविराम गति से कहती जा रही थीं:—

'दादा को देखो, दादा को!' और दोनों बालक एक तो दादा का उचकना देख कर, दूसरे यात्रा के आनन्द से, बेतहाशा किलकारी मार रहे थे। उनकी हँसी से भड़क कर घोड़ा चौकड़ी भरने लगा। हेक्टर ने घोड़े को रोकने की चेष्टा की और इस चेष्टा मे उसका टोप जमीन पर गिर गया। तब कोचवान ने

गाड़ी से उतरकर टोप उठाया और उसे हाथ मे लेते हुए, उसने दूर से अपनी स्त्री से कहा—'ज़रा, बच्चों को चुप रक्खो। इस तरह चिल्लाएँगे तो घोड़ा मुझे ले कर सरपट भाग चलेगा।'

उन्होंने एक बग़ीचे की हरी-हरी घास पर बैठकर, साथ में लाये हुये सामान को निकाल कर भोजन किया।

कोचवान तीनों घोड़ों की देख-भाल कर रहा था, फिर भी हेक्टर पल-पल मे उठ खड़ा होता था और जाकर देख आता था कि उसके घोड़े को अच्छी तरह चारा खिलाया जा रहा है या नहीं। उसने जाकर घोड़े की गर्दन थपथपाई और उसे रोटी, केक तथा शक्कर खिलाई।

उसने घोषित किया—'घोड़ा तेज़ है। पहले तो उसने मुझे झकझोर दिया। पर तुमने देखा, मैने कितनी जल्दी उसे काबू मे कर लिया। वह अपने स्वामी को पहचान गया है, अब वह मुझसे बदमाशी नहीं करेगा।'

जैसा कि उसने निश्चय किया था, सब लोग बाजार के रास्ते से घर लौटे।

वह विशाल राजपथ गाडियो से खचाखच भरा था। फ़ुट-पाथ पर फेरीवालों की इतनी भीड़ थी कि यहाँ-से-वहाँ तक सर-ही-सर दिखाई पडते थे। सूरज की रोशनी मे सब चीजे जगमगा रही थीं, गाडी की वार्निश तथा घोड़े का साज भी चमाचम चमक रहा था।

मालूम पड़ता था कि मनुष्यों की, गाड़ियों की, तथा घोड़ों

की इस विशाल भीड़ के रूप मे जीवन का एक अविराम प्रवाह बह रहा है।

बाजार के निकट पहुँचते ही हेक्टर के घोड़े मे एक नई उमङ्ग आ गई। उसके सवार ने उसे भरसक रोकने की चेष्टा की, पर वह गाड़ियो के पहियो के बीच से होता हुआ तेजी से अपने अस्तबल की ओर दौड चला।

गाड़ी अब पीछे, बहुत पीछे छूट गई थी। घोड़ा जब वाणिज्य-भवन के सामने पहुँचा तो उसने सामने की सड़क निर्जन देखी और वह बाएँ मुड़ कर सरपट दौड़ चला।

एक बूढी स्त्री बड़ी शान्ति के साथ सड़क पार कर रही थी। वह एकदम हेक्टर के मार्ग मे थी और घोड़ा बड़े वेग से दौड़ रहा था। जब वह घोड़े को वश मे कर सकने मे असफल हुआ तो बड़े जोर से चिल्लाने लगा—'ऐ औरत, ऐ औरत!'

वह स्त्री पता नही, बहरी थी अथवा क्या, वह तब तक शान्ति के साथ पथ पर चलती रही, जब तक कि घोड़े का सीना उससे जा नही टकराया और वह तीन बार लुढ़क कर दस गज दूर सड़क पर नही जा गिरी।

कई लोग चिल्ला उठे—'रोको, रोको।'

हेक्टर भयभीत हो कर घोड़े से लटक गया और चिल्लाया—'बचाओ, बचाओ।'

घोड़ा जोर से उछला और वह गेद की तरह उस पर से लुढककर एक पुलिसमैन की गोद मे गिर पड़ा, जो उसे रोकने के लिए उसके मार्ग मे खड़ा हो गया था।

पल भर मे एक क्रुद्ध, कोलाहल करती हुई भीड़ ने उसे चारो ओर से घेर लिया। एक वृद्ध सज्जन, जो छाती पर बहुत से तमगे पहने थे और जिनके बड़ी-बड़ी सफेद मूँछे थी, क्रोध से उछल रहे थे। वह बार-बार यही कह रहे थे—'वाह रे आप! जब आप मूर्ख हैं तो घर मे क्यों नहीं बैठे रहे। जब आप को घोड़े की सवारी करने ही नही आती तो क्या आप सड़क पर लोगों की जान लेने के लिए घोड़े पर निकले थे।'

इसी समय चार आदमी बुढिया को उठा कर ले आए। वह मर गई मालूम पड़ती थी। उसका चेहरा एक तरफ लटका था। सारे शरीर मे धूल लगी थी।

'इस बुढिया को डाक्टर के यहाँ ले जाओ।' वृद्ध सज्जन ने आदेश दिया, 'और हम लोग, आओ, थाने पर चलें।'

हेक्टर दो पुलिसमैनों के बीच मे चलने लगा। एक तीसरा पुलिसमैन उसके घोडे की बागडोर थामे था। पीछे-पीछे एक भीड़ चल रहीं थी। सहसा गाडी भी आ पहुँची। उसकी पत्नी उतर कर बेतहाशा उसकी ओर दौड़ी, नौकरानी बुद्धि-शून्य हो गई, बच्चे चिल्लाने लगे। उसने पत्नी को समझाया कि मै शीघ्र घर लौटूँगा, एक स्त्री घोड़े से टकरा कर गिर पड़ी है, और कोई बात नही है, और उसका सङ्कट-ग्रस्त परिवार गाड़ी में बैठकर घर चला गया।

थाने मे उसने जो बयान दिया वह बहुत छोटा था। उसने अपना नाम और दफ़्तर का पता लिखा दिया। सब घायल बुढिया के समाचार की प्रतीक्षा करने लगे। जो पुलिसमैन

सूचना लेने के लिए गया था, लौटकर आया। 'बुढिया को होश आ गया है, पर उसे अन्दर बड़ी पीड़ा हो रही थी। उसने बताया है कि वह कोयला बेचती है, पैसठ वर्ष उम्र है और मैडम सिमन नाम है।'

जब हेक्टर को मालूम हुआ कि वह मरी नही है तो उसे आशा हुई और उसने उसकी दवा का सारा खर्च देने का वचन दिया। वह डाक्टर की दूकान की ओर चला।

दरवाज़े पर एक भीड़ जमा थी। बुढिया एक आराम कुर्सी मे लेटी पीड़ा से चिल्ला रही थी, उसका हाथ एक ओर लटक रहा था, चेहरा पीला पड गया था। उसका कोई अङ्ग भङ्ग नहीं हुआ था, पर भय था कि अन्दर कोई गहरी चोट लगी है।

हेक्टर ने उससे पूछा—'क्या बहुत पीड़ा हो रही है?'

'हाँ।'

'कैसी पीड़ा है?'

'मालूम पड़ता है भीतर आग जल रही है।'

डाक्टर आया। उसने पूछा—'क्या आप ही से यह दुर्घटना हुई है?'

'हाँ, जी।'

'इस स्त्री को अस्पताल भेजना होगा। मै एक अस्पताल जानता हूँ, वहाँ छः आने रोज पर एक कमरा मिल जायगा। कहिए तो मै प्रबन्ध कर दूँ?'

हेक्टर को बहुत हर्ष हुआ, उसने डाक्टर को धन्यवाद दिया और निश्चिन्त होकर घर लौटा।

उसकी पत्नी आँखों मे आँसू भरे उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसने उसे ढाढस बँधाया।

'कोई बात नही है। बुढिया अब अच्छी है, तीन दिन मे चगी हो जायगी। मैने उसे अस्पताल भेज दिया है। कोई बात नहीं है।'

दूसरे दिन दफ़्तर से लौटते हुए वह मैडम सिमन का हाल लेने गया। उसने बुढिया को सन्तोष के साथ एक गिलास मे शोरवा पीते हुए पाया।

'क्या हाल है?' उसने पूछा।

उसने उत्तर दिया—'क्या कहूँ बाबू जी, कुछ भी फर्क नही है। मेरी तो जिन्दगी बरबाद हो गई। कुछ भी फायदा नहीं है।'

डाक्टर ने कहा कि अभी कुछ दिन प्रतीक्षा करनी होगी, शायद कोई पेचीदगी उठ खड़ी हो।

उसने तीन दिन तक प्रतीक्षा की और तब उसके पास गया। बुढ़िया साफ-सुथरी बैठी थी। आँखे चमक रही थी। हेक्टर को देखते ही वह कॉखने लगी।

'बाबू जी, अब तो मै हिल-डुल भी नहीं सकती, जरा भी नही। मालूम पड़ता है अब जिन्दगी पूरी होने तक ऐसी ही रहूँगी।'

हेक्टर की नस-नस मे एक कॅपकपी दौड़ गई। उसने डाक्टर से पूछा। डाक्टर ने हाथ उठा कर कहा—'मै क्या बताऊॅ? कुछ समझ मे नही आता। जब हम लोग उसे उठाने

की कोशिश करते हैं तो वह चिल्लाने लगती है । जब हम उसकी कुर्सी खिसकाते हैं तब भी हृदय-विदारक चीख़ चीख़ती है। वह जो कुछ कहती है, मुझे उसपर विश्वास करना ही पड़ता है। मैं उसके पेट के भीतर तो पैठ सकता नहीं। जब तक मै उसे चलते-फिरते नही देख लेता, मुझे यह मानने का कोई अधिकार नही है कि वह झूठ बोलती है।'

बुढिया निश्चल बैठी सब सुनती रही, उसकी आँखों मे कुटिलता झलक रही थी।

एक सप्ताह बीता, दूसरा सप्ताह बीता, पूरा महीना बीत गया। मैडम सिमन ने आराम कुर्सी नहीं त्यागी। वह दिन-रात खाती थी, मोटी होती जाती थी, अन्य रोगियों से हॅस-हॅस कर बाते करती थी और अपनी कुर्सी मे अचल बैठी रहने की जैसे आदी हो गई थी। मालूम पड़ता था कि पचास बरस तक ऊॅचे-ऊॅचे जीने पर चढने, घर-घर कोयला ढोने तथा घरों की सफाई करने के बाद अब इतने परिश्रम के मूल्य-स्वरूप उसे जीवन मे विश्राम मिला था।

हेक्टर भयभीत, प्रतिदिन आता था। प्रतिदिन वह उसे शान्त, स्थिर और गम्भीर भाव से यही कहते सुनता था—'बाबू जी, मै तो हिल-डुल नही सकती, जरा भी नही।'

प्रतिदिन हेक्टर की स्त्री चिंतातुर भाव से पूछती थी—'अब मैडम सिमन की अवस्था कैसी है?'

और प्रत्येक बार निराशा भरे स्वर मे वह उत्तर देता था—'कोई भी परिवर्तन नही है, जरा भी नहीं।'

उन्होने नौकरानी छुड़ा दी, क्योंकि उसके वेतन का भार

अब सहा नहीं जाता था। दूसरे खर्चे भी घटा दिए और सारी अतिरिक्त आमदनी खर्च हो गई।

तब हेक्टर ने चार प्रमुख डाक्टरों को बुलाया। वे बुढिया को घेर कर खड़े हो गए। उसने उन्हें अपनी परीक्षा करने, अपना शरीर छूने मे जरा भी बाधा नहीं दी। वह कुटिल आँखो से उन्हें देखती रही।

'इसे चलाना चाहिए', एक डाक्टर ने कहा।

बुढिया चिल्ला उठी—'नहीं डाक्टर साहब, मै चल नहीं सकती, मैं चल नहीं सकती।'

तब उन्होंने उसे दोनों हाथों से पकड़ कर उठा लिया, दो-एक कदम घसीटा, पर वह उनके हाथ से फिसलकर जमीन पर गिर पड़ी और इतना हाय-हाय करने लगी कि डाक्टरों को उसे बडी सावधानी से उठाकर फिर आराम कुर्सी पर बिटाना पड़ा।

उन्होंने अपना बुद्धिमत्ता-पूर्ण मत व्यक्त करते हुए कहा कि अब यह कोई काम-काज करने लायक नहीं रही है।

हेक्टर ने यह समाचार जब अपनी पत्नी को सुनाया तो वह कुर्सी पर गिर पडी और अवरुद्ध कण्ठ से बोली, 'अच्छा होगा, उसे यहाँ ले आया जाय। इस तरह खर्च कम पड़ेगा।'

वह उछल पडा। 'तुम क्या कहती हो। उसे अपने घर मे रखे, यहाँ अपने पास?'

पर उसकी स्त्री अब सब कुछ करने को तैयार थी। उसने आँखों मे आँसू भर कर कहा—'प्यारे, और हम क्या कर सकते हैं। दोष तो मेरा नहीं है।'

शैतान की करामात

वह बड़ा गरीब किसान था। अपनी मेहनत पर विश्वास और ईश्वर के प्रति श्रद्धा रखकर वह सदैव निश्चिन्त रहता। उसकी गरीबी भी बड़ो की ईर्ष्या की वस्तु थी। एक दिन वह खेत जोतने के लिए तड़के ही अपने हल को लेकर खेत पर गया। नाश्ते के लिए उसके पास केवल कुछ रोटियाँ थीं। उसने उसे खेत के पास की झाड़ी के नीचे रख दिया और उस पर अपना फटा कोट डालकर निश्चिंत मन से काम मे जुट पड़ा।

धूप के दिन थे। ग्यारह बजते-बजते वह पसीने से तर हो गया। उसकी दुबली और कमजोर घोड़ियाँ जो हल को खींच

रही थीं, अब पस्त हो गई थीं। उसने हल खोल दिया और नाश्ता करने के विचार से उसी झाड़ी की ओर चला। घोड़ियाँ भी इधर-उधर चरने को घूम पड़ीं।

नाश्ता करके थोड़ी देर आराम करने की बात सोचता हुआ वह झाड़ी के नीचे पहुँच गया। उसने अपना कोट हटाया किन्तु उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। जब उसने वहाँ अपने नाश्ता की रोटियों को नहीं देखा तो उसने बहुत खोजा किन्तु उनका कहीं पता न था। चारों ओर ध्यानपूर्वक आँखें फाड़-फाड़कर देखा, कोट को अनेक बार टटोला—उसे झाड़ा भी—किन्तु तो भी रोटियाँ कहीं न मिलीं। उस किसान के आश्चर्य की सीमा न रही। उसने सोचा यह कैसा तमाशा है; मैंने तो यहाँ किसी को नहीं देखा, फिर वे क्या हुईं।

बात यह थी कि जब वह भला और ईमानदार किसान हल चला रहा था, तभी शैतान ने रोटियाँ चुरा ली थीं और वह यह देखने के लिए कि यह भला किसान भूख से पीड़ित होने पर तो उसे अवश्य ही गाली देगा और बुरा-भला कहेगा, झाड़ी के पीछे जाकर बैठा। भलों को बुरा बनाना, यही इनका काम होता है।

रोटियों को न पाकर किसान बहुत दुःखी हुआ। उसने कहा—'अच्छा मैं तो भूख से मर नहीं जाऊँगा। जिस बेचारे ने रोटियाँ ली हैं उसे आवश्यकता थी; वही खाए। ईश्वर उसका भला करे।'

किसान ने कुएँ से पानी निकालकर पी लिया। थोड़ी देर

आराम करने के बाद उसने फिर घोड़ी को पकड़कर हल में जोता और पहले की ही तरह अपने काम मे तत्पर हो गया।

शैतान निराश हो गया। वह उस किसान को बुरी राह पर न ले आ सका। इसी के लिए वह आया था। हिम्मत हार कर वह अपने सरदार के पास पहुँचा।

सरदार के पास जाकर उसने सारा हाल कह दिया। उसने किस तरह रोटियाँ चुराई, फिर भी भूख से तड़पते हुए उस किसान ने गाली के बदले आशीर्वाद दिया।

सरदार बहुत ही नाराज़ हुआ। उसने कहा—'किसान ने ही यदि तुझे जीत लिया तो इसमे उसका नही तेरा दोष है। तू निरा मूर्ख है। इसी तरह यदि सारा समाज भला बना रह जावे, तो हम लोगों की जीविका ही मारी जावेगी। यह मामला इसी तरह नहीं छोड़ा जा सकता।'

फिर कुछ सोचकर सरदार ने कहा—'तुम उसी किसान के पास जाओ और उसे ठीक करो। तुम्हें तीन वर्ष की छुट्टी मिलती है। यदि तुमने इतने दिनो मे अपना काम पूरा न किया तो भयकर दण्ड के भागी होगे।'

छोटा शैतान बहुत ही डरा। वह अपने मुक्ति के अनेको उपाय सोचता फिर दुनिया की ओर दौड़ पड़ा।

अब की बार वह अपने काम मे मेहनत से जुट पड़ा। उसने कुली का वेश धारण किया और उस गरीब किसान के यहाँ काम करने लगा।

उस साल घोर अकाल पड़ा। किसानों के खेत पानी न

मिलने से धूल से भरे पड़े थे। छोटे शैतान ने उस किसान को दलदल मे बीज बोने की राय दी।

उसकी राय अच्छी थी। उस गरीब किसान के पौधों मे बड़ी-बडी बाले फली। किसान के भले दिन नज़र आए।

साल के अन्त मे उसके पास काफी गल्ला बचा था। कैसी अच्छी उसकी तकदीर थी ?

शैतान ने दूसरे साल उस किसान से ऊँची भूमि पर बीज बोने के लिए कहा। उस साल खूब वृष्टि हुई। लोगो की फसल पानी से सड़ गई। किन्तु उस किसान के खेत ऊँची भूमि पर लहरा रहे थे।

उस साल किसान का बखार, अनाज से भरा पड़ा था। किसान उसके खर्च करने का ढग भी नही जानता था। वह उस गल्ले के ढेर को देखा करता।

शैतान ने अनाज से शराब बनाने के लिए किसान से कहा। शैतान के तरीके से उसने शराब बनाई। अब किसान खुद शराब पीने और दूसरों को पिलाने लगा।

छोटे शैतान ने अपने काम मे सफलता पाई। वह अब अपने सरदार के पास गया और कहा—'मैने सब ठीक कर दिया।' उसकी गर्दन अभिमान से टेढी पड़ गई थी।

सरदार ने कहा—'चलो, मै देखूँगा कि तुम्हारा काम पूरा हुआ है या नही।' वह उसके साथ उस किसान के घर की ओर चल पड़ा।

किसान के घर पर गाँव वालों की भीड़ लगी थी। वह

सब को शराब पिला रहा था। उसकी स्त्री साकी बनी थी। हँसी का फुहारा छूट रहा था।

किसान की स्त्री शराब पीकर बदमस्त हो रही थी। उसके पैर ठिकाने नहीं पड़ रहे थे। लड़खड़ाने से एक बार उसके हाथ से शराब का बर्तन ही गिर पडा। बर्तन चूर-चूर हो गया। सारी शराब बह चली।

किसान क्रोध से काँप उठा। उसके लिए यह हानि असह्य थी। उसने कड़क कर कहा—'शैतान की बच्ची, तेरे होश ठिकाने नही हैं। इस अमूल्य शराब को गंदले पानी की तरह बहाती है।' वह तड़प कर उसके सामने आ खड़ा हुआ।

शैतान वहाँ पहुँच गए थे। छोटे शैतान ने सरदार को सकेत किया। जिसका भाव था, 'देखते हो—मैं कितना सफल हुआ हूँ! अब कोई इसकी रोटी चुरावे तो क्या होगा।'

किसान अब स्वय अतिथियो के प्याले भरने लगा। उसकी स्त्री भय से दूर खड़ी काँप रही थी।

उस समय एक निर्धन किसान खेत पर से काम करके लौट रहा था। मेहनत ने उसकी हड्डियाँ चूर कर दी थीं। शराब की लालच से वह भी वहाँ आ बैठा। वह लोगों को प्याले पर प्याले खाली करते देख रहा था। वह बेचारा बैठा अपनी जीभ से ओठो को चाट रहा था। मगर किसान ने उससे बात भी नही पूछी। केवल परिश्रम से साँस लेते हुए भुनभुना कर उसने कहा—'मै राह चलतो के लिए शराब नहीं बनाता।'

शैतान का सरदार इस उत्तर से बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी

प्रसन्नता देखकर शैतान फूल उठा। उसने कहा—'ठहरिये आज इसका पूरा तमाशा देख लिया जाय। मैने इसे ऐसी जगह पहुँचा दिया है जहाँ से वह लौट ही नही सकता।' अभिमान तथा सफलता से उसकी बाँछे खिल गई।

किसान और उसके अतिथि शराब से उन्मत्त हो उठे थे। वे एक दूसरे की प्रशसा मे बड़ी-बड़ी बाते मारने लगे। उनके उपद्रवों से दूसरे चकित हो उन्हें दूर से देख रहे थे।

सरदार ने शैतान की बडी प्रशसा की। कहा—'शराब के चगुल मे फँसकर अब ये मेरे हाथ से कहाँ जा सकते हैं।'

शैतान ने कहा—'कुछ देर और प्रतीक्षा कीजिए, अभी तो इनके खेल का आरम्भ है। अभी ये लोमडियो की तरह दुम हिलाकर उचक रहे हैं फिर रीछो की तरह क्रूर बन जावेगे।'

उन सबों ने एक-एक प्याला और ढाला। उनके स्वर अब तीव्र और द्वेष से भरे होने लगे। गाली-गलौज का व्यापार गर्म हो चला।

हाँथा पाई की नौबत आ गई। एक ने दूसरे को घायल करना शुरू किया।

वह गरीब किसान भी जो वहाँ शराब की लालच मे बैठा था, मार से न बच सका।

सरदार की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। उसने शैतान की पीठ ठोंकते हुए कहा—'क्या ही सुन्दर दृश्य है।'

'प्रतीक्षा कीजिए'—शैतान ने कहा—'अभी ये रीछों की तरह क्रूर हैं। जब ये फिर शराब के प्याले खाली करेगे तो सुअरों की तरह कीचड़ मे जा धसेंगे।

उन सबो ने फिर प्याले उठाये। अब वे नशे से झूम रहे थे। उनके शोर का अन्त न था। अपने उपद्रव से वे अब अपने ही को घायल करने लगे।

जब वे वहाँ से खिसके तो रास्ते मे पागलों की तरह आपस मे एक दूसरे के ऊपर गिर रहे थे, एक दूसरे पर आक्रमण कर रहे थे। उनका शोर दूर तक सुनाई पड़ता था।

किसान रास्ते से उनके शोर सुनकर अपने दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ। किन्तु वह अपने को सम्भाल न सका। वह नीचे पनाले मे गिर पड़ा। जहाँ से उसे हटाने वाला अब वहाँ कोई न था।

सरदार यह देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने शैतान से कहा—'तुमने पीने की बड़ी अच्छी वस्तु बनाई। निस्सन्देह तुम अपने कार्य मे दक्ष हो। तुमने कैसे इस चीज़ को बनाई है? अवश्य ही तुमने पहिले इसमे लोमड़ी का खून मिलाया होगा। क्योकि वे पहले लोमड़ियों की तरह चालाक, चापलूस जान पड़ते थे। फिर भालू का खून और बाद मे सुअर का मिलाया होगा। ओह! ये भालुओ की तरह क्रूर और सुअरो की तरह आवाज़ करने वाले बन गए थे।'

शैतान ने कहा—'नही, मैने इनमे से कुछ भी नही लिया, मैने केवल उसे आवश्यकता से अधिक रोटियाँ ही दी। मनुष्य मे जन्म ही से पशु रक्त है। किन्तु तब तक वह रक्त उसकी नसो मे स्वतन्त्रता पूर्वक नही प्रवाहित होता, जब तक कि मनुष्य परिश्रम से अपनी रोटियाँ कमाता है। पहले यह आदमी अपनी

अन्तिम रोटी भी त्याग सकता था। किन्तु जिस समय उसके पास आवश्यकता से अधिक धन हो गया तब उसे ऐश और आराम की सूझी। मैंने यही फन्दा इसके लिए लगाया था। जिस समय इसने ईश्वर की पवित्र देन को अपने विषय वासना की तृप्ति के लिए शराब बनाने मे दुरुपयोग किया उसी दिन पशु सम प्रबल हो उठा, यह जब तक शराब पीता रहेगा पशु ही बना रहेगा।'

सरदार ने शैतान की पीठ ठोकते हुए कहा—'शाबास! मेरे सब नौकरो मे तुम बुद्धिमान हो। मैंने तुम्हें आज से उनका सरदार नियुक्त किया।'
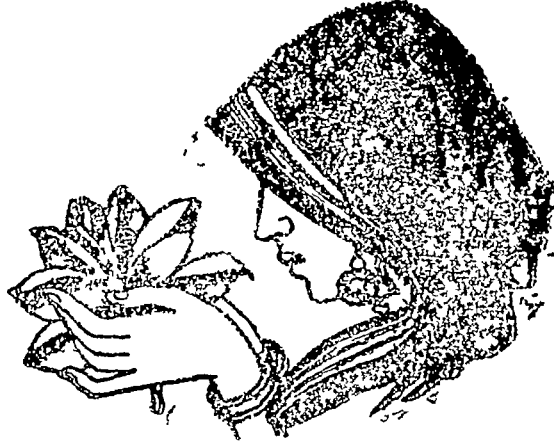
जीवन-नाट्य

वह बालक था। आम पकने का समय था। वह अपने मामा के यहाँ घूमने गया था। बाग में आम खाने जाते समय राह में उससे एक लड़की से भेंट हुई। लड़की भी बालिका थी। बालक के मन में उसको देखते ही शोर मच गया—'यही-यही,—मैं इसी को खोज रहा था। मैं इसी को चाहता हूँ।'

किन्तु अब वह बालक न था! वह लड़की से मुँह खोलकर एक शब्द भी न बोल सका। केवल अवाक् रह कर उसकी ओर देखता भर रहा। लड़की ने उसकी ओर देखकर केवल मुसकिरा दिया।

उस बार इतना ही हुआ। बालक मामा के यहाँ से घर चला आया। किन्तु उस दिन की एक बार देखी हुई बालिका की हँसी वह भुला न सका।

वह फिर जब मामा के घर आया तब वह कालेज का विद्यार्थी था। फिर भी लडका ही था। इस बार भी उस बालिका से तालाब के किनारे भेंट हुई। उसकी अवस्था उस समय चौदह वर्ष की थी। किन्तु अब उस समय उसके हृदय के बीच जैसे मातृत्व की भावना जाग्रत हो उठी थी। लड़की की पहले की चञ्चल गति अब पत्थर एव स्थिर हो उठी थी। और समस्त शरीर मे एक अपूर्व लावण्यधारा पारद राशि की भाँति तरल हो उठी थी।

वह इस बार और भी अवाक् रह कर उसकी ओर देखने लगा। इस बार भी उस बालिका ने उसकी ओर देख कर हँस दिया। किन्तु उस बार की भाँति उसके मुँह की ओर सहज ही देखकर नहीं किन्तु अपना मुँह दूसरी ओर रखकर, दृष्टि उसकी ओर चला कर।

उनकी बातचीत होते भी देर न लगी। किन्तु जो बातचीत हुई उसे केवल उन्हीं दो आदमियो ने जाना और उन्हीं चार कानों ने सुना। उसे और न कोई जान सकता था, न दूसरे कान सुन ही सकते थे।

लडकी विधवा थी। उससे विवाह करना असाध्य-साधन था। किन्तु जहाँ सब कुछ निछावर था, वहाँ प्राण की बलि देकर भी तो उसका उद्धार किया जा सकता है। लड़का भविष्य जीवन के लिए भी परिश्रम से तैयारी कर रहा था। वह इञ्जी-

नियर होगा। उसे अन्त तक पढ़ने के लिए अभी आठ वर्ष लगेंगे। आठ वर्ष!

लड़का बीच-बीच में मामा के घर आकर उस लड़की को देख जाता था। उसका हृदय नित्य-नित्य उसके नवीन प्रेम से भर रहा था—सम्पूर्ण हो रहा था। उन दोनो के बीच प्रेम एक नवीन आशा के आनन्द से चुपचाप दृढ हो रहा था।

कुछ दिनों बाद लड़के ने फिर जब उसे देखा तब उसका रङ्ग विवर्ण, आँखे भीतर धँसी हुई और उदास, बाल बिखरे हुए और सुगठित शरीर का लावण्य ककाल सार—नितान्त विश्री हो गया था। इस तरह उसके सम्पूर्ण श्री के हीन हो जाने से लड़के को दुःख हुआ। किन्तु उसके प्रेम में किंचितमात्र कमी नहीं हुई।

लड़का समय पर इञ्जीनियर हो गया। धन और मान से समन्वित भी हुआ। कितनी सुन्दरी लड़कियो के पिता दोनों वक्त उसके समीप हाजिरी देने लगे। किन्तु वह उस चौदह वर्ष की बालिका के समीप की हुई प्रतिज्ञा को भूला नहीं था। उसने उसी विधवा से विवाह किया।

लड़की के सिर मे फिर बाल आ गये। किन्तु उनमें परिपाटी नहीं। आँखे उभर आई थीं किन्तु उनमें वह चचलता नहीं। रंग भी साफ हो चला किन्तु उस चौदह वर्ष की बालिका का उच्छ्वसित लावण्य कहाँ और हृदय में यद्यपि प्रेम का सम्पूर्ण विस्तृत सुख, शाति का पूर्ण राज्य था किन्तु उसकी सारी कोमलता बाहर जैसे धूल में मिली पड़ी थी। लड़के ने चौदह वर्ष

की बालिका को प्यार करके बाइस वर्ष की स्त्री से विवाह किया फिर भी वह उसे उसी भाँति प्यार करता था।

प्यार था, किन्तु वह पहिले की व्यग्रता, आवश्यक वाचालता पलकों के भीतर से एक दूसरों को देखना और छिप छिपकर हँसना विदा हो चुके थे। क्षण भर के अदर्शन में प्रलय का बाँध गृह-रुदन मे डूब गया था।

उनको क्रमशः दो लड़के और एक लड़की हुई। लड़की अपने पिता के लिए प्राण, उसकी आँखों की तारा और हृदय की अनन्त सात्वना थी।

लड़की जितनी बढती गई उसमें उतनी ही उसकी माँ की अतीत छवि प्रस्फुटित होने लगी। और उसका उतना ही अपने पिता के हृदय पर अधिक अधिकार जमने लगा। उसकी दस वर्ष की अवस्था में उसकी माँ की वही चौदह वर्ष की अवस्था वाली छवि उसके पिता की आँखों मे दिखलाई देने लगी।

उसका पिता अपनी छुट्टी के समय सदैव पास रहता। उसे वह कभी अपनी आँखों की ओट न करता। अपनी लड़की ही को लेकर वह व्यस्त था। उस लड़की के लिए उसकी माँ को चिन्तित होने की आवश्यकता न पडती थी।

दुर्बल शरीर से प्रसव और उस पर गृह के नाना कार्य व्यापार, विचारी माँ का शरीर जैसे छिन्न-भिन्न हो गया था। स्वामी-स्त्री दोनो ही अपने कामों मे फँसे रहते। अधिक साह-चर्य का किसी को अवसर नहीं था, फिर भी दोनों मे प्यार था। पर जैसा पहले था—वैसा कहाँ?

लड़की एक दिन सवेरे बिछौने से उठी ही नहीं। माँ ने कहा—'यह स्कूल न जाने के लिए बहाना है।' किन्तु पिता ने शीघ्र ही डाक्टर को बुलाया।

लड़की के पास मृत्यु दूत खड़े थे। उसे यक्ष्मा हो गया था। माँ घर के कामों में व्यस्त थी। पिता ने उसकी शुश्रूषा के लिए खाना, पीना, सोना सब कुछ छोड़ दिया। उसका पिता, धन, श्रम, चेष्टा और परिश्रम सबसे अपनी लड़की को आराम पहुँचाने के लिए तत्पर था। लड़की को किसी बात का अभाव न था।

वह जब बात करती उसके पिता का वक्ष वेदना से भर आता। किन्तु वह उसे दबा कर लड़की को सदैव प्रसन्न रखने की चेष्टा करता।

एक दिन वह हँसी नही, बोली नही। सब शेष हो गया।

उस दुःख का वर्णन करना असम्भव है। शव को उठाने के लिए जब लोग आए उस समय उसका पिता एकदम पागल हो गया था। वह लोगों को मारने दौड़ता था। ऐसी दूध की धोई लड़की मर गई? उसके पिता को यह कैसे विश्वास होता? उसे अब भी आशा थी कि वह बच जायगी।

लोगों ने उसकी बात सुनी नही। उसे दूर हटा दिया। ऐसी सुन्दर सोने की पुतली सी लड़की चिता पर जला दी गई।

पागल पिता ने थोड़ी सी राख लेकर एक समाधि निर्मित की। सफेद पत्थर की सुन्दर समाधि! वह रोज कुछ सुगन्धित सफेद फूल और माला से उसका शृङ्गार कर वहाँ अपने आँसू गिरा आता।

इस तरह एक साल बीत गया। उसके पिता को दूसरे वर्ष कन्या की समाधि पर इस तरह रोज जाकर शोक प्रकाश करने का अवसर कम मिलने लगा। कार्य-भार से समय कम मिल पाता। वह मन ही मन लज्जित होता। वह अपनी कन्या के प्रति उचित रीति से शोक प्रकाश नहीं कर पाता था। समय बहुत बड़ा चिकित्सक है। उसका धीरे-धीरे सम्पूर्ण शोक, सारी लज्जा और चिर-संचित स्मृति सब नष्ट हो गए।

दो कन्याएँ और पैदा हुईं। किन्तु वे उसकी तरह न थीं, यही उसके पिता के मन में आता था।

और स्त्री? इस विश्व ब्रह्माण्ड में जिसकी सी स्त्री नहीं थी उसकी अब सारी मोहकता नष्ट हो चुकी थी। उस लता की मञ्जरी की भाँति, जिसने एक दिन अपने सौरभ से सम्पूर्ण दिगन्त को भर दिया था—वही आज सूखकर अधिक कुश्री बन गई।

जीवन की स्फूर्ति—आनन्द का ज्वार बैठ गया था। जरा ने धीरे-धीरे गर्दन पकड़ कर पीठ झुका दी थी। पैर टेढे और चलने में काँपने लगे थे।

घर के भीतर वह आनन्द नहीं रह गया था। वह बूढी स्त्री बाल-बच्चों को भी सँभाल न पाती। वे लड़के कुर्सी के पैर तोड़ते, तकिया से रुई निकालते, चूने की दीवाल पर कालिख पोतते और हँसी के बदले रोने से घर भरा करते थे।

अब मालिक और मालिकिन भी बात-बात में चिड़चिड़ा उठते, बातें कड़ी और व्यवहार कठोर हो चला था। मन में मालिन्य बढ़ रहा था। वह पूर्व का स्नेह अब कहाँ!

मालिक की उम्र जब पचास की हुई तब उनकी स्त्री का देहान्त हो गया। बूढे के मन में अतीत यौवन की सम्पूर्ण स्मृति नवीन हो उठी। आँखों के सामने उसकी वही चौदह वर्ष की अवस्थावाली लड़की के खिलते हुए यौवन का चित्र उदित होने लगा। वह शोक से कातर हो उठा। यह शोक उसके मरने का नहीं और अपनी उस बाइस वर्ष की ब्याही हुई स्त्री का भी नहीं, अपितु वह उसी चौदह वर्ष की किशोरी की स्मृति की थी। उसकी अपनी बाइस वर्ष की वधू और घर की बूढी मालिकिन के रूप में उसे कुछ भी शोक नहीं था।

बुड्ढा लड़के लड़कियों मे दिन काटने लगा। लड़कियों की शादी हो गई। लड़के किसी न किसी काम में फँसकर इधर-उधर विदेश चले गए। बूढा वहीं अपने अन्तिम दिन गिनता रहा।

साल भर तक वह अपनी स्त्री की एक-एक बात याद कर उसे अपने सब साथियों को सुनाता रहा। उसके बाद जो हुआ —वह विलक्षण था।

एक अठारह वर्ष की युवती के साथ उसका परिचय हुआ। बुड्ढा उसकी आकृति के भीतर अपनी मृत पत्नी के चौदह वर्ष वाली छबि देख रहा था। आश्चर्य! उस सुन्दर अतीत काल के एक प्रभात को आम के बगीचे के बीच, एक चौदह वर्ष की बालिका को देखकर उसे ज्ञात हुआ था कि इस निखिल जगत् में इसकी समता नहीं, ठीक वैसा ही आज भी उसे जान पड़ने लगा था। यह विधाता की ही लीला है?

बुड्ढायुवती को देखकर भूल गया हो यही नहीं, वह भी उसे प्यार करने लगी थी। बुड्ढे का टूटा हुआ शून्य हृदय गर्व

सुख से भर उठा। वह आज भी नितान्त अपदार्थ नहीं है। उसके मन ने एक अष्टादश वर्षीय युवती पर विजय प्राप्त किया है।

बुड्ढे ने फिर ब्याह किया। ब्याह न करने से घर कैसे चलता ? इस वृद्धावस्था मे उसे कौन सम्भालता ? अपने निरीह बाल बच्चों को मातृ-हीन रखना भी तो पिता के प्राण को स्वीकार नहीं था।

किन्तु वे बाल-बच्चे एक दम अकृतज्ञ थे। उन सबने अपने पिता के इतने महत् स्नेह के निदर्शन को अपनी माँ का अपमान समझ लिया। वृद्धावस्था मे पिता को शादी करते देख कर उनका सिर नीचा हो गया। उन्हें ससार के सामने मुँह दिखलाना भार हो उठा। कैसी अद्भुत बात।

क्या ऐसी अकृतज्ञता होती है। बुड्ढे ने अपने लड़कों से सब सम्बन्ध तोड़ लिया। उसने नवीन उत्साह से नवीन स्त्री को लेकर नये तरह से अपनी गृहस्थी मे मन लगाया। बुड्ढे के बूढे दोस्तों ने कहना शुरू किया—'इस पुराने पेड मे दो तरह के फलों की फसल है किन्तु वे मीठे है न खट्टे।'

वर्ष पूरा होते न होते उसकी नई स्त्री को लड़का हुआ। वृद्धावस्था में योंही एक तो नीद कम आती है उस पर बालक के रोने से उसकी नींद मे और भी व्याघात पहुँचता। इस उम्र में यह सब उपद्रव नहीं अच्छा लगता है। उसने दूसरे घर में अपना बिस्तर लगाया।

स्त्री अपने भाग्य को धिक्कारने लगी—रो पड़ी। स्त्री जीवन कितना दुःखमय है। बुड्ढे ने एक वर्ष पहिले जो प्यार की

लाखों बातें उससे की थीं वे सब उसके मन में अद्भुत प्रवञ्चना जान पड़ीं। उसके मन मे अपनी उस भाग्यवती सपत्नी के ऊपर केवल क्रोध होने लगा जिसने उसके स्वामी का सम्पूर्ण माधुर्य और सब सुहागदान उपभोग कर उसके लिए अनादर और उपेक्षा ही छोड़ इस जगत् से अदृश्य हो गई थी। यह सब उसी का दोष था। बुड्ढे ने केवल उसके शून्य स्थान को पूर्ण करने के लिए उससे शादी की थी। उसका वहाँ कुछ भी नहीं। यह सोचकर वह और भी व्यथित हो गई।

वह अपने स्वामी का मनहरण करने के लिए जिन सब विलास-कलाओं और प्रणय लीलाओं का अनुसरण करने लगी, बुड्ढे की उससे उसके प्रति और भी अरुचि हो गई, बुड्ढा मन ही मन क्षुब्ध हो उठा। वह अपने हृदय मे तुलना करता— मेरी पहिली पत्नी जैसी सरल सीधी थी, वैसी यह नहीं है। इसका मिज़ाज़ चिड़चिड़ा और व्यवहार असगत होता है। इससे फिर उसके मन में अपनी पहिली सन्तानों के प्रति ममता उत्पन्न हो गई। उसको घर मे रहना असह्य जान पड़ने लगा। उसे अपनी वृद्धावस्था की मूर्खता स्पष्ट जान पड़ने लगी। वह उसके लिए पश्चाताप करने लगा। उसका समस्त जीवन भार हो गया।

इतने दिन बुड्ढे के मन मे वही आम के बगीचे मे देखी चौदह वर्ष की लड़की की आकृति ध्यान मे आती थी। जिसकी समता पाकर वह दो-दो बार मुग्ध हुआ और अपने जीवन को दूभर कर लिया। एक बार अपनी कन्या की आकृति और अन्त

मे जब पहिले उसने अपनी दूसरी पत्नी को देखकर शादी की थी, कैसा विलक्षण धोखा था।

किन्तु इस समय—जीवन के अपने अन्तिम दिनों में—इस निरानन्द ससार के बीच अपनी इस स्त्री के कर्कश भर्त्सनापूर्ण व्यवहार से पक कर, उसके सामने धैर्य शीला कर्मपटु गृहिणी की मूर्ति उदित हो उठी, जिसने चुपचाप आकर उसके घर को सम्भाला, पुत्र और स्वामी की सेवा मे अपने दिन काटे और कभी भूलकर भी कोई अप्रिय बात नहीं कही थी। बुड्ढा जिस तुच्छ मोहवश चौदह वर्ष की तरुणी के रूप पर भूला था वह इस वृद्धावस्था में धक्का खाकर छिन्न-भिन्न हो गया। आज उसने समझा—उस चौदह वर्ष की तरुणी ने प्रेम की परिणति अपने उस सेवा निपुण गृहणीत्व में की थी। वह व्यर्थ उसे तुच्छ समझकर, आकृति पर मर रहा था।

मृत्यु के सहारे उसी से मिलने के लिए वह अपने अन्तिम दिन अब गिन रहा था।

कमीजें

वह अपना ध्यान अन्य महत्वपूर्ण बातों मे लगाना चाहता था, पर वह अप्रिय बात चित्त से हटती न थी। उसके घर की नौकरानी उसे लूट रही थी। वह उसके यहाँ कई-बरसों से थी और उसकी आदत छूट गई थी कि घर की चीजों की देख-भाल रखा करे। सामने कपड़ों की आलमारी खुली पड़ी थी, उसमें कमीजो की ढेरी लगी थी। वह नित्य प्रति उस ढेरी से एक कमीज उठा लिया करता था। तब, कुछ समय के बाद, नौकरानी एक फटी हुई कमीज उसे दिखा कर कहती थी, 'बाबू जी, सब कमीजों की यही हालत है, बाजार जाकर नई कमीजे खरीद लाइये।'

बाबूजी 'बहुत अच्छा' कह कर बाजार चले जाते थे। बाजार में कपड़ों की जो भी दूकान पहले दिखाई पड़ती थी, उसी मे जाकर वे आधे दर्जन कमीजे खरीद लेते थे। उनके मन में यह अस्पष्ट याद रहती थी कि कुछ ही महीने पहिले वह इसी प्रकार का काम कर चुके हैं। कमीजों का ही नहीं, जूता, मोजा, साबुन—घर की सभी छोटी-बड़ी चीजों का, जिनकी आवश्यकता विधुर जीवन मे भी पड़ा करती है, यही हाल रहता था। आए दिन उसे बाजार जाने की आवश्यकता पडती थी। शायद बुड्ढे आदमी के ससर्ग से चीजे भी जल्दी घिस जाती थीं, अथवा राम जाने उन्हें क्या हो जाता था। वह हमेशा बाजार से नई चीजें खरीद ला कर रखता था परन्तु जब वह अपने कपड़ों की आलमारी खोल कर देखता था तो उसमें फटे चीथड़े ही दिखाई पड़ते थे। वह इन बातों पर अधिक ध्यान न देता था, क्योंकि वह घर से निश्चिंत था। घर का सारा प्रबन्ध जोनका के हाथ में था।

आज इतने बरसों के बाद, उसके ध्यान में पहली बार यह बात आई कि वह नियमित रूप से लूटा जारहा है। बात यह हुई कि सुबह उसे एक दावत में शामिल होने का निमन्त्रण मिला। बरसों से वह कहीं गया न था। उसके मित्रों की सख्या बहुत ही थोडी थी, इसलिए जब उसे दावत में शरीक होने का अप्रत्याशित निमन्त्रण मिला तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह खुशी से फूला न समाया। उसने अपने कपड़ों की आलमारी यह देखने के लिए खोली कि उसमें कोई बढिया रेशमी कमीज है? पर उसे आलमारी मे एक भी साबित कमीज नहीं दिखाई पड़ी। तब उसने

अपनी नौकरानी को बुला कर पूछा कि मेरे कपड़ों में अच्छी कमीज है या नहीं ?

जोनका क्षण भर तक चुप खड़ी रही, इसके बाद उसने तेज आवाज में कहा, 'बाबू जी, बाजार से नई कमीजें खरीद लाइए। पुरानी में पेवन्द लगाना व्यर्थ है, उनमें खिड़कियाँ बन गई हैं।' उसके मन में एक अस्पष्ट स्मृति थी कि उसे नई कमीजें खरीदे हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए हैं। फिर भी वह निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकता था, इसलिए वह कोट पहन कर बाजार जाने के लिए तैयार हो गया। कोट पहनने पर उसका हाथ अनायास ही जेबों मे पहुँच गया। उसमें बहुत से कागज भरे थे। वह उन कागजो को देखने लगा कि जो व्यर्थ हों उन्हे फेक दूँ। सहसा उन कागजों में से एक रसीद निकल पड़ी। वह कमीजों के बिल की रसीद थी, अमुक-अमुक तारीख को उसने रुपया चुकाया था। केवल सात सप्ताह की बात थी। सिर्फ सात हफ़्ते पहले उसने आधे दर्जन नई कमीजे खरीदी थीं। यह उसके लिए एक नवीन आविष्कार था।

वह कमीजें खरीदने के लिए बाजार नहीं गया, बल्कि अपने कमरे में टहलता रहा। वह अपने लम्बे विधुर जीवन पर, एकाकी जीवन के दीर्घ समय पर, दृष्टि दौड़ाने लगा। पत्नी की मृत्यु के बाद से जोनका पर ही घर का सारा भार था। उसके मन में कभी सन्देह अथवा अविश्वास की भावना भी न उत्पन्न हुई थी। आज उसके चित्त मे एक अशांति उत्पन्न करने वाली बात उठ खड़ी हुई थी—वह नियमित रूप से लूटा जा रहा है। उसने अपने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई, वह निश्चय-

पूर्वक नहीं कह सकता था कि घर से कौन-कौन चीजें गायब हैं, परन्तु उसे कुछ रिक्तता का आभास हो रहा था। वह अपने मस्तिष्क पर जोर दे कर सोचने लगा कि अमुक स्थान पर कौन-सी चीज रक्खी रहा करती थी। एक तीव्र अवसाद में उसने अपनी पत्नी की आलमारी खोली, उसमे उसकी याद दिलाने वाले उसके बहुत से वस्त्र रक्खे थे। परन्तु आश्चर्य, उसमें अब केवल थोड़े से चिथड़े पड़े हुए थे। उसकी पत्नी की इतनी सारी चीजे थी, वे सब क्या हो गईं ?

उसने आलमारी बन्द कर दी और अपना मन बरबस अन्य बातो की ओर ले जाना चाहा। वह शाम की दावत के बारे मे सोचने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु पिछले अनेक बरसों की स्मृति बार-बार दौड आती थी। उसे अपना जीवन पहले की अपेक्षा कही अधिक एकाकी, नीरस और कटु प्रतीत होने लगा। उसे सहसा मालूम पडा कि जैसे दुर्भाग्य की छाया उसके जीवन पर मडराती रही हो। सच तो यह था कि इन अनेक बरसों में वह कितनी ही बार सतोष और सुख की नींद सोया था, पर इस समय उसे मालूम पड़ने लगा कि वह अपने एकाकी जीवन से बेखबर था और लुटेरे उसके सिर के नीचे का तकिया तक लूट ले गए थे। उसे मालूम पडा कि वह निपट अकेला है। उसका हृदय पीड़ा से कराह उठा। जिस समय वह अपनी पत्नी को दफना कर लौटा था, उस समय भी जीवन इतना एकाकी और दुखी नहीं प्रतीत हुआ था। उसे मालूम पड़ा कि वह बहुत ही बुड्ढा हो गया है, उसके शरीर का अग-अग जर्जर हो गया है और जीवन ने उस पर बड़ा अत्याचार किया है।

उसकी समझ में एक बात नहीं आ रही थी—जोनका को मेरी चीजे चुराने की आवश्यकता क्यों पड़ी? वह उन चीजों का क्या करती है? सहसा उसे एक बात याद आई, जिससे उसे द्वेषयुक्त संतोष हुआ। जोनका का एक भतीजा था, जिसे वह अत्यधिक प्यार करती थी। उसे याद आया कि जोनका उससे कितनी ही बार उसकी तारीफ कर चुकी थी। उसे याद आया कि अभी बहुत दिन नहीं हुए जब जोनका ने उसका फोटो भी उसे दिखाया था। उसके काले घुंघराले बाल हैं, चपटी नाक है और मूछों से अभिमान टपकता है। तो मेरी चीजें उसके पास जाती हैं, इस ख्याल से उसका खून खौल उठा। वह अत्यधिक क्रोध में रसोई घर की ओर गया, जोनका को 'डाइन' या ऐसा ही कुछ कहा और इसके बाद अपने कमरे में आकर भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया। जोनका रसोई घर की दीवाल से टिक कर फफक फफक कर रोने लगी।

वह दिन भर जोनका से नहीं बोला। जोनका इसलिए लंबी लम्बी साँसे ले रही थी कि मालिक ने उसे बुरा-भला कहा। वह बर्तनों पर अपना क्रोध उतारने लगी। जो चीज सामने आती थी उसे पटक देती थी। उसे पता नहीं था कि मालिक क्यों नाराज है। दोपहर को वह आलमारी खोलकर अपनी सब चीजें सम्भालने लगा। उसके क्रोध की सीमा न थी। उसे कभी इस और कभी उस चीज की याद आती थी; उसे अब वे सब चीजें बहुत बहुमूल्य प्रतीत हो रही थीं। अब उन चीजो मे एक भी न बच रही थी, सब गायब हो गई थीं। अत्यधिक क्रोध की अवस्था

में उसकी आँखों में आँसू छलछला आने को हुए, उसने बरबस अपने को रोका।

वह खुली आलमारी के सामने गर्द से नहाया हुआ बैठा था। उसके हाथ मे पिता का एक मनीबेग था। घर की तमाम चीजों मे केवल यही मनीबेग बचा था। मनीबेग में दो बड़े-बड़े छेद थे। वह उसे कितने बरसों से लूट रही है कि घर की सारी चीजों का सफाया हो गया! उसका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। अगर उस समय जोनका उसके सामने आ जाती तो वह उसे अवश्य पीटता। अब मैं उसका क्या करूँ? वह आवेश में बुदबुदाया। उसे आज ही निकाल दूँ, या उसे पुलिस में दे दूँ? लेकिन तब कल से खाना कौन बनायेगा? होटल में जाकर खा लिया करूँगा, उसने निश्चय किया। परन्तु नहाने के लिए पानी कौन गरम करेगा? उसने अपने मन को बरबस इन चिंताओं से हटाया। 'इस बारे मे मै कल निश्चय करूँगा' उसने अपने मन को आश्वासन दिया. 'कल तक कुछ न कुछ अवश्य होगा।' यह सोचकर कि उसके बिना उसका काम नहीं चल सकता, उसका दिल बैठा जाता था। पर यह सोच कर कि वह उसे लूटती रही है और उसे दण्ड देना आवश्यक है, फिर जोश चढ आता था।

कमरे मे जब अँधेरा छा गया तब उसने बहुत तर्क बितर्क के बाद रसोई-घर तक जाकर जोनका से कहा कि तुम अमुक-अमुक जगह चली जाओ। उसने जोनका को बहुत से अनावश्यक काम बताए और कहा ये सब काम फौरन हो जाने चाहिए। उसने बड़े सोच-विचार के बाद इन कामों की सूची बनाई थी। जोनका

ने कुछ कहा नहीं, वह इस तरह सिर झुका कर चल पड़ी जैसे जीवन मे चिरकाल से वह सताई गई है।

जोनका के बाहर का दरवाजा बन्द करने की आवाज उसने सुनी। अब वह घर मे अकेला था। धड़कते हुए हृदय से वह दबे पाँव रसोईघर की ओर चला। वह कुछ देर तक रसोईघर के दरवाजे पर हाथ धरे खड़ा रहा। एक भय ने उसे आ घेरा था। उसका हृदय कह रहा था कि चोरों की भाँति जोनका का संदूक खोल कर तलाशी लेने का काम उससे नही हो सकता। लेकिन जब वह लौट जाने का निश्चय कर रहा था, तभी उसके हाथ घूम गए, रसोईघर का दरवाजा खुल गया।

रसोईघर अपनी स्वच्छता से चमक रहा था। एक किनारे जोनका का बक्स रखा हुआ था, उसमें ताला लगा हुआ था, पर ताली का कहीं पता न था। ताला लगा देख कर उसके संदेह की पुष्टि हुई, उसने चाकू से ताला खोलना चाहा पर वह खुला नहीं। उसने चारों ओर ताली ढूँढी पर वह कहीं नहीं मिली। आध घन्टे तक ताले से परेशान होने के बाद उसे मालूम हुआ कि संदूक में ताला नहीं लगा है, केवल खटका दबा देने से वह खुल जाता है।

उसकी आध दर्जन नई कमीजे फीते में बँधी ज्यों-की-त्यों ऊपर ही रखीं हुई थीं। एक कागज के डिब्बे में उसकी पत्नी के सोने के कड़े, पिता के सोने के बटन और माँ का चाँदी के फ्रेम में जड़ा हुआ फोटो रखा था। उसने बक्स की सारी चीजें जमीन पर बिखेर दीं। उसमे उसे अपना साबुन का बक्स, दाँत मलने का नया ब्रुश, तकिए का गिलाफ, जङ्ग खाया हुआ

पिस्तौल और धुएँ से काला सिगार मिला। अवश्य ही ये चीजें उसकी आलमारी से निकाली गई थीं, उसकी अधिकाश चीजें अब उस घु घराले बालवाले भतीजे के व्यवहार मे आती होंगी। उसका क्रोध शांत हो गया, उसकी जगह उसके हृदय में अब दुख उमड़ने लगा। 'जोनका ! जोनका !! तो तुमने मुझसे यह बदला चुकाया ! ··मैंने तुम्हारे साथ कौन सी बुराई की थी जो तुमने मेरे साथ ऐसा सलूक किया।'

एक-एक करके वह सब चीजे अपने कमरे में ले गया और वहाँ मेज पर फैलाकर रख दीं। जोनका की चीजे उसने उसके सदूक में भर दीं। एक बार उसके मन में आया कि वह जोनका की सब चीजे पहले ही की भाँति सजा कर रख दे, परन्तु यह काम उससे हो नहीं सका। वह अपने कमरे में वापस चला आया, सन्दूक के दोनो पल्ले खुले पड़े रहे, जैसे वे चोरी की कथा कह रहे हो ! उसे यह सोच कर बड़ा भय लगा कि जोनका थोड़ी देर मे लौट कर आती होगी और उसे उससे चिल्ला-चिल्ला कर बाते करनी होंगी। वह इस दृश्य की जितनी ही अधिक कल्पना करता था, वह उतना ही अधिक उसे अरुचिकर प्रतीत होता था। वह जल्दी जल्दी कपड़े पहनने लगा। कल मैं जोनका से सब बदला लूंगा, उसने मन मे सोचा। आज इतना ही काफी है कि उसे पता लग जाय कि उसकी चोरी खुल गई है। उसने एक नई कमीज उठा ली, परन्तु उसके काज इतने सख्त थे कि उससे उसका बटन नहीं खुला, इधर जोनका किसी भी क्षण लौट सकती थी।

उसने अपनी पुरानी कमीज शीघ्रता से पहन ली, इस बात

पर ध्यान भी नहीं दिया कि वह फटी है। कपड़ा पहनने के बाद वह चोरो की भाँति घर से निकल पड़ा। बाहर जोरों की बारिश हो रही थी। घटे भर तक वह सड़कों पर घूमता रहा। अत मे दावत मे जाने का समय आ पहुँचा। दावत मे वह अपने को अत्यत एकाकी अनुभव करता रहा। उसने अपने प्राचीन परिचित मित्रो से गपशप लड़ाने का बहुत प्रयत्न किया, पर उसकी समझ मे नही आ रहा था कि उनसे वह क्या बात करे। उनसे मिले हुए उसे कई साल बीत गए थे और इतने बरसो मे दुनियाँ कितनी बदल चुकी थी। उसे किसी से शिकायत नहीं थी। वह अलग मुस्कराता हुआ चुपचाप खड़ा था। सामने बिजली की तेज रोशनी चमक रही थी, आगन्तुक नर-नारी एक दूसरे से हँस-बोल रहे थे, कोलाहल मचा था। सहसा एक नवीन भय ने उसे आ घेरा। ओह, मै कैसा लगता हूँगा! उसकी कमीज तार-तार हो रही थी, कोट पर एक बड़ा-सा धब्बा था, जूते मे पेवन्द लगे थे। उसने चाहा कि धरती फट जाय और वह उसमे समा जाय। उसने चारो ओर छिपने की जगह ढूँढने के लिए नजर दौड़ाई, पर सब तरफ प्रकाश ही प्रकाश था। वह कहाँ चला जाय कि किसी की दृष्टि उसपर न पड़े। उसे अपना पैर आगे बढाने मे डर लग रहा था। कहीं सब लोगों की दृष्टि उसी पर न केन्द्रित हो जाय। वह घबड़ाहट मे पसीने से तर हो गया। वह ऐसा भाव बनाए था, जैसे वह किसी को देख नही रहा है, पर उसकी दृष्टि छिपे-छिपे चारों ओर दौड रही थी कि कहीं किसी की दृष्टि उस पर तो नहीं पड़ रही है। दुर्भाग्य से एक पुराने परिचित मित्र ने उसे देख लिया। दोनों

स्कूल में साथ-साथ पढते थे। मित्र ने उससे बातें करनी आरम्भ कर दीं, जिससे उसकी घबराहट और बढ गयी। उसने कुछ इस तरह के उत्तर दिए कि मित्र को बुरा लगा, वे दूसरी ओर चले गए। अकेले होने पर उसने सन्तोष की एक साँस ली। अन्त में दावत समाप्त होने पर वह सबों से पहिले अपने घर भाग आया, उस समय बारह भी नही बजे थे।

रास्ते मे उसे फिर जोनका का ध्यान आया। तेज़ कदम बढाने के साथ उसके मस्तिष्क मे नाना प्रकार के विचार आने-जाने लगे। उसने मन ही मन सोचा कि वह जोनका से क्या-क्या कहेगा। वह सहज गम्भीर मुद्रा से लम्बे-लम्बे वाक्यों मे अपना क्रोध प्रकट करेगा। जोनका को बुरा-भला कहेगा और फिर अन्त मे उसे क्षमा कर देगा। वह उसे जबाब नहीं देगा। जोनका रोएगी, गिड़गिड़ाएगी, कहेगी, अब ऐसा नहीं करूँगी। वह चुपचाप अचल भाव से उसकी प्रार्थना सुनता रहेगा, अन्त मे गम्भीर मुद्रा में उससे कहेगा—'जोनका, मैं तुम्हें अपना चरित्र सुधारने का एक अवसर और दूँगा। सचाई और ईमानदारी से रहो; बस यही मै तुमसे चाहता हूँ। मै बुड्ढा आदमी हूँ, तुम्हारे साथ क्रूर नहीं होना चाहता।'

वह इन विचारों मे इतना मग्न था कि कब उसने अपने घर मे पैर रक्खा, यह उसे मालूम ही न हुआ। जोनका के कमरे मे प्रकाश हो रहा था। उसने दराज मे आँखे लगा कर भीतर रसोई घर मे झाँका। या ईश्वर, यह क्या दृश्य है। जोनका का झुरियो वाला चेहरा रोने से फूल आया था। वह अपना सारा सामान इकट्ठा करके बाँध रही थी। यह दृश्य देख

कर वह स्तब्ध रह गया। उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। वह अपने कमरे में अँगूठे के बल गया, जिससे जोनका को उसकी आवाज न मिले। क्या जोनका ने नौकरी छोड़ने का निश्चय कर लिया है।

सामने मेज पर उसकी वे सब चीजें पड़ी थीं, जिन्हें वह जोनका के सन्दूक से चुरा लाया था। वह उन चीजों को उठा-उठा कर देखने लगा। उसे उन चीजों के वापस मिल जाने की उस समय जरा भी प्रसन्नता न थी। उसने मन ही मन सोचा, सम्भवतः जोनका को पता लग गया है कि मुझे उसकी चोरी की सूचना मिल गई है। वह समझती है कि अब मै उसे निकाल दूँगा, इसलिए वह अपना सामान बाँधकर जाने की तैयारी कर रही है। खैर, मैं कल तक उसे इसी भ्रम मे रहने दूँगा। इतना दण्ड उसके लिए यथेष्ठ होगा, हाँ कल सुबह मै उससे बाते करूँगा। लेकिन सम्भव है कि वह इसी समय आकर मुझसे क्षमा प्रार्थना करे। वह फूट-फूट कर रोयेगी। मेरे पैरों पर गिरेगी, गिड़गिड़ाएगी। 'जोनका! इतना ही काफी है, मैं तुम्हारे साथ कठोरता से पेश नहीं आना चाहता, तुम घर मे रह सकती हो।'

वह शाम के कपड़े पहिने ही कुर्सी पर बैठा हुआ किसी नवीन घटना की प्रतीक्षा कर रहा था। घर मे एकान्त निस्तब्धता छाई थी। उसे जोनका की प्रत्येक पग-ध्वनि साफ सुनाई पड़ रही थी। उसने जोनका के—क्रोध मे तेजी से—बक्स बन्द करने की आवाज साफ सुनी, इसके बाद सारे घर मे फिर निस्तब्धता छा गई। यह क्या हो रहा है? वह सहसा उछल पड़ा और

कान खड़े करके सुनने लगा। किसी व्यक्ति के जमीन पर हाथ पटक-पटक कर मर्मान्तक स्वर में रोने की आवाज थी। थोडी देर बाद रोने की आवाज क्रमशः क्षीण हो गयी। सिसकियाँ भरने की आवाज आती रही। जोनका रो रही थी। यह सत्य था कि वह किसी नवीन घटना की प्रतीक्षा में बैठा था, लेकिन यह घटना अप्रत्याशित थी। वह अपने धडकते हुए हृदय पर हाथ रखे खड़ा रहा और रसोईघर से आने वाली प्रत्येक आवाज कान लगाए सुनता रहा। जोनका केवल रो रही थी। शायद पल भर बाद वह उसके कमरे मे आयेगी और उससे क्षमा-याचना करेगी।

वह अपने हृदय की धड़कन को कम करने के लिए कमरे मे टहलने लगा, लेकिन जोनका आई नहीं। टहलते-टहलते वह रुक जाता था और फिर कान लगाकर सुनने लगता था। जोनका का हिचकियाँ भरना अभी समाप्त नही हुआ था। यह सारा काण्ड उसे बड़ा दुखदायी प्रतीत हो रहा था। अन्त मे उसने निश्चय किया कि मै स्वय जोनका के पास जाऊँगा और उससे कहूँगा—'जोनका, अब भविष्य मे ऐसा काम मत करना। चुप हो रहो। मैं सब बाते भूल जाऊँगा। भविष्य मे ईमानदारी से रहना।'

सहसा बड़ी तेजी से उसके कमरे का दरवाजा खुल गया। जोनका दरवाजे पर खड़ी थी आँखों से आँसू अब भी बह रहे थे। रोने के कारण चेहरा सूज आया था और देखने मे बड़ा भयावना लगता था।

'जोनका!' उसने कठिनता से साँस लेते हुए कहा।

'क्या...मैं...इस प्रकार के व्यवहार के योग्य थी!' जोनका ने सिसकियाँ भरते हुए कहा। 'आपने तो मेरे साथ ऐसा सलूक किया जैसे मै चोर हूँ। मुझे चुल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए।'

'लेकिन, जोनका!' उसने चौकन्ने होकर कहा, 'तुम्ही तो मेरी सारी चीजे उठा ले गई थीं, तुम खुद सोचो। क्या तुम सब चीजे नहीं ले गई थी?'

परन्तु, जोनका ने यह बात जैसे सुनी ही नहीं। 'मैं ऐसी गई-बीती हूँ कि मेरे पीछे मेरे सन्दूक की तलाशी ली जाय, जैसे मैं चोर हूँ। बाबू जी, आपको मुझे इस प्रकार अपमानित नहीं करना चाहिये था। मै मरते दम तक आपसे ऐसे व्यवहार की आशा नहीं करती थी! क्या मैं वास्तव मे चोर हूँ! मैं और चोर!'

जोनका फूट-फूट कर रोने लगी। 'क्या मैं चोर हूँ! मैं चोर हूँ, मेरे कुल की मर्यादा का ही जरा ध्यान रखते। मैं आप से ऐसे व्यवहार की आशा नहीं करती थी। आपको मेरे साथ ऐसा सलूक नहीं करना चाहिए था।'

'लेकिन, जोनका!' उसने कुछ भरे हुए गले से कहा, 'कुछ समझ से काम लो। आखिर ये चीजे तुम्हारे बक्स मे कैसे पहुँचीं। पहले तुम यही बताओ कि ये चीजे तुम्हारी हैं या मेरी? बताओ, क्या ये चीजें तुम्हारी हैं?'

'मै कोई भी बात नही सुनना चाहती', जोनका ने सिसकते हुए कहा—'हे ईश्वर, मुझे यह भी दिन देखना था! जैसे मैं कोई चोर हूँ। मेरे पीछे मेरे बक्स की तलाशी ली गई। मैं

अभी, इसी वक्त—' जोनका आवेश में चीख पड़ी—'मै अभी इसी वक्त चली जाऊँगी। मैं इस घर मे सुबह तक भी नहीं रहूँगी, नहीं–नहीं।'

'जोनका! जरा समझ से काम लो' उसने अपनी भर्राई हुई आवाज मे कहा, 'मैं तुम्हें जवाब नहीं दे रहा हूँ। तुम रहो, जोनका! और जो कुछ बात हुई, उसे भूल जाओ। मैंने तो अभी तक तुमसे इस विषय मे एक शब्द भी नहीं कहा है। अब चुप हो जाओ, जोनका!'

'आप दूसरी नौकरानी लगा लीजिए', जोनका ने आहत स्वर मे कहा—'मैं इस घर में सुबह तक भी नहीं ठहरूँगी। मैं ऐसी गई-बीती नहीं हूँ कि कुतिया की तरह टुकड़े की लालच में पड़ी रहूँ—मै नहीं रहूँगी।' जोनका का कंठ सहसा तेज हो गया। 'मैं यहाँ नहीं रहूँगी, चाहे आप मुझे हजार रुपये महीने ही क्यों न दीजिए। मै रात सड़क पर गुजारना अधिक पसन्द करूँगी।'

'जोनका! जरा समझ से काम लो' उसने हताश-भाव से कहा—'क्या मैंने तुम्हारे दिल को चोट पहुँचाई है। लेकिन तुम जरा सोचो। तुम इससे इनकार नहीं कर सकतीं।'

'आप दिल पर चोट पहुँचाने की बात कहते हैं' जोनका ने अपना आहत स्वर तेज करते हुए कहा। 'दिल पर चोट पहुँचाने की बात नहीं है—मेरे पीछे मेरे सन्दूक की तलाशी लेने की बात है, जैसे मैं चोर हूँ। आपकी समझ से यह बात चाहे कुछ न हो, लेकिन मेरे लिए डूब मरने की बात है। आज तक किसी ने मेरा इतना अपमान नहीं किया। मै कोई ऐसी-वैसी नहीं हूँ।'

यह कहते-कहते वह फूट-फूट कर रोने लगी और तेजी से दरवाजा खोलकर बाहर चली गई।

वह चित्रलिखित सा बैठा रहा। 'पश्चात्ताप तथा क्षमा-याचना के स्थान पर यह नाटक! उसका आशय क्या है? मेरे पीछे वह मेरी चीजें चुराती है, और जब यह चोरी मुझ पर खुल जाती है तो इसे अपना अपमान समझती है। उसे चोरी करने की जरा भी लज्जा नहीं है, लेकिन जब कोई उसे चोर कहता है तो उसके दिल पर चोट लगती है।

धीरे-धीरे उसके हृदय में उसके प्रति बड़ी सहानुभूति उत्पन्न होने लगी। 'यह समझने की बात है', उसने अपने से कहा कि हर एक आदमी में कुछ कमजोरी होती है। उसे सबसे अधिक क्रोध उस समय आता है जब उसकी उस कमजोरी की ओर इङ्गित किया जाता है। आदमी अनेक बुराइयों से घिरा रहने पर भी अपने को बहुत चरित्रवान मानता है। वह दुष्कर्मों में फँसे रहने पर दुष्कर्म को बहुत बुरा मानता है। उसकी हृदयस्थ कमजोरी पर उँगली रखते ही वह फौरन पीड़ा और क्रोध से कराह उठता है। अपराधी को कभी भी अपने किये पर पश्चात्ताप नहीं होता है, बल्कि वह इस बात से क्रोधित होता है कि उसका अपराध पकड़ा गया।'

रसोई घर से सिसकियाँ भरने की आवाज आ रही थी। वह वहाँ जाना चाहता था, पर दरवाजा भीतर से बन्द था। वह दरवाजे के निकट खड़ा होकर जोनका को समझाने का प्रयत्न करता रहा, पर वह उत्तर मे और जोर से सिसकियाँ भर रही थीं।

नर्त्तकी

बात बहुत पहले की है। तब उसकी नई उम्र थी, देखने में बहुत सुन्दर लगती थी। निकोलाई—उसका—प्रेमी, उसके निकट बैठा था। बड़ी कड़ी गरमी पड़ रही थी। सूरज की किरणें जैसे डसे लेती थीं। निकोलाई ने देशी ठर्रे की पूरी बोतल चढ़ा ली थी, उसकी तबियत बहुत खराब हो रही थी। दोनों ही बैठे-बैठे ऊब रहे थे और घूमने जाने के लिए शीतल सन्ध्या की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सहसा किसी ने दरवाजे की घन्टी बजाई। निकोलाई केवल बनियाइन पहने बैठा था। वह अपनी जगह से उछल पड़ा और प्रश्न-सूचक नेत्रों से पाशा की ओर देखने लगा।

'कोई नहीं है! या तो डाकिया होगा या मेरी पड़ोसिन!' नर्त्तकी ने कहा।

निकोलाई को डाकिया या उसकी पड़ोसिन का जरा भी भय न था। फिर भी इतमीनान के लिए वह कोट उठा कर दूसरे कमरे मे चला गया। पाशा दरवाजा खोलने के लिए बढी।

पाशा को बहुत आश्चर्य हुआ जब उसने देखा कि नवागन्तुक न तो डाकिया है, न उसकी पड़ोसिन। उसके सामने एक सुन्दरी नवयुवती खड़ी थी। उसके कपड़े सम्भ्रात महिलाओं जैसे थे। वह किसी ऊँचे घराने की मालूम पड़ती थी।

नवागन्तुका का चेहरा पीला पड़ रहा था, वह कठिनता से साँस ले पाती थी।

'क्या काम है आपको?' पाशा ने पूछा।

महिला ने तत्काल उत्तर न दिया। वह कमरे में जाकर चकित हिरनी की तरह सब चीजों को देखने लगी। उसके चेहरे पर पीड़ा की छाया थी। कुछ समय बीतने पर वह प्रकृतिस्थ हुई। उसने एक कुर्सी ले ली।

'क्या मेरे पति यहाँ हैं?' अन्त मे उसने सिर उठा कर पूछा। रोने के कारण उसकी आँखे सूज आई थीं।

'आप किसको पूछती हैं?' पाशा बहुत डर गई। उसके हाथ-पैर ठंढे पड़ गए। 'आप किसको पूछती हैं?' काँपते हुए स्वर में उसने दोहराया।

'मेरे पति, निकोलाई।'

'नहीं,. मै मैं उन्हे नही जानती।'

कुछ क्षण निस्तब्धता रही। महिला अपने कीमती रूमाल से बार-बार अपनी आँखें पोछती रही। पाशा को इतना साहस नहीं हुआ कि उसके बगल में बैठ जाय। वह सहमी हुई उसकी ओर देखती रही।

'तो आपका कहना है कि मेरे पति यहाँ नहीं हैं?' महिला ने कठोर स्वर मे पूछा। उसके ओठों पर एक भेद भरी मुस्कराहट खेल रही थी।

'मैं...मैं समझी नही, आपका क्या मतलब है।'

'कुलटा!' महिला ने घृणा की दृष्टि से पाशा की ओर देखते हुए कहा, 'हाँ.. हाँ, तुम कुलटा हो। मुझे बहुत खुशी है कि मुझे तुम्हारे मुँह पर यह कहने का अवसर मिला है!'

पाशा ने अनुभव किया कि नवागन्तुका महिला पर उसकी वेष-भूषा का बुरा प्रभाव पड़ा है। उसे अपने पाउडर लगे हुए गालों और रगे हुए ओठो पर लज्जा आने लगी। वह सोचने लगी कि अगर वह बिना पाउडर के सादी वेश-भूषा में होती तो वह भी सम्भ्रान्त महिला होने का नाट्य आसानी से कर सकती थी। तब तो वह इस महिला के बगल में कुर्सी पर बैठने का साहस भी कर सकती।

'मेरे पति यहाँ अवश्य हैं !' महिला ने फिर कहा, 'लेकिन इससे मुझे कोई सरोकार नहीं कि वह यहाँ इस समय हैं कि नहीं! मैं तुम्हें यह बताने के लिए आई हूँ कि वह ग़बन मे पकड़े गए हैं और पुलिस उनकी खोज मे है। और यह सब तुम्हारे कारण हुआ है !'

महिला उठ खड़ी हुई और उत्तेजना से कमरे में इधर-उधर टहलने लगी। पाशा आश्चर्य के साथ उसकी ओर देखती रही। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि महिला चाहती क्या है।

'आज वह गिरफ़्तार हो जायँगे,' महिला ने सुबकियाँ लेते हुए कहा, 'मैं जानती हूँ यह सब किसके कारण होगा! यह सब तुम्हारे कारण होगा, तुम्हारे कारण! कुलटा!' महिला के मुख पर पाशा के प्रति घृणा के भाव स्पष्ट थे। ऐसा मालूम होता था कि वह पाशा के मुँह पर थूक देगी। मैं निस्सहाय हूँ ·· सुनती है, डाइन ?······मैं निस्सहाय हूँ, तू इस समय मुझसे समर्थ है। लेकिन मेरा भी परमात्मा है। वह मेरी और मेरे बच्चों की रक्षा करेगा। परमात्मा सब कुछ देखता है। वह न्यायी है। वह तुम्हें दण्ड देगा। मैंने रो-रो कर रातें काटी हैं। तुम भी कभी याद करोगी कि मैंने पाप किए थे।'

फिर कुछ देर तक निस्तब्धता रही। महिला इधर-उधर चहल-कदमी करती रही। पाशा स्तम्भित होकर उसकी ओर निहार रही थी। वह अभी तक उसका मन्तव्य नहीं समझ पायी थी और प्रतिक्षण किसी भीषण दुर्घटना होने की आशङ्का कर रही थी।

'मै आपके पति की बाबत कुछ भी नही जानती !' उसने कहा। उसके कण्ठ मे जैसे कुछ अटक रहा था।

'तुम झूठ बोलती हो !' महिला ने तेज स्वर मे कहा, 'मुझे सब पता है। मै तुम्हे बहुत समय से जानती हूँ। पिछले पाँच महीने में एक दिन भी ऐसा नहीं बाता है, जब मेरे पति तुम्हारे यहाँ न आए हों।'

'हाँ, आए ! तो इसमे बुराई की कौन सी बात हैं ! कितने लोग यहाँ आते हैं। मै उनसे कहने नहीं जाती कि तुम मेरे यहाँ आओ। वे खुद आते हैं।'

'मै तुम्हें बता रही थी कि ग़बन का पता चल गया है। उन्होंने अपने दफ़्तर का रुपया चुराया है। यह सब तुम्हारे लिए —हाँ, हाँ, तुम जैसी औरत के लिए। अब मेरी बात सुनो।' महिला सहसा पाशा के ठीक सामने खड़ी हो गई और स्थिर नेत्रों से उसकी ओर देखने लगी।

'तुममें कुछ लाज-शर्म नही है। तुम पराए मर्दों के साथ रहती हो। तुम्हें तो सिर्फ रुपया प्यारा है। लेकिन मुझे विश्वास नहीं होता कि तुम इतनी गई-गुजरी हो कि तुममे जरा भी मानवता न रह गई हो। उनके बीवी है, बच्चे हैं। अगर जेल चले गए तो उनके बच्चे भूखे मरेंगे। ख्याल करो ! अभी हमे कष्टों और दुखों से बचाने के लिए एक रास्ता है। अगर आज मैं ग़बन का रुपया जमा कर दूँ, नौ सौ रुपए का प्रबन्ध कर सकूँ तो उन पर मुकदमा नहीं चलाया जायगा। सिर्फ नौ सौ रुपयों की बात है।'

'नौ सौ रुपए!' पाशा ने शान्त भाव से कहा, 'मुझे इन नौ सौ रुपयों के बारे मे कुछ पता नहीं। मुझे नहीं दिए गए।'

'मैं तुमसे नौ सौ रुपए खैरात नहीं माँगती। मैं तुमसे रुपए नहीं माँगती। मुझे रुपयों की जरूरत भी नहीं है। मुझे दूसरी चीज की जरूरत है। पुरुष तुम जैसी स्त्रियों को आभूषण उपहार में दिया करते हैं। बस मेरे पति ने तुम्हे जो चीजे दी हैं, उन्हें लौटा दो।'

'उन्होंने मुझे कभी आभूषण नहीं दिए।' पाशा ने कातर-स्वर में कहा। अब उसकी समझ में सारी बातें आ रही थीं।

'तब सब रुपया कहाँ गया? उन्होंने अपना, मेरा और अन्य लोगों का भी रुपया फूँका है। मैं तुमसे विनती करती हूँ। इन सब आपदाओं के कारण मैंने तुम्हे बहुत सी बुरी-भली बाते कह दी हैं मुझे क्षमा कर दो। अगर तुममें दया है तो अपने को मेरी जगह पर रख कर कल्पना करो। मैं प्रार्थना करती हूँ, सब आभूषण लौटा दो।'

'तुम मेरा विश्वास करो।' पाशा ने कन्धे सिकोड़ते हुए कहा, 'ईश्वर मुझे दुर्दिन दिखाए, अगर मैं झूठ बोलती होऊँ! उन्होंने मुझे कभी उपहार नहीं दिये। लेकिन हाँ...' नर्त्तकी ने अपनी गलती सुधारी, 'एक बार उन्होंने मुझे दो चीजें दी थीं। मैं खुशी से उन चीजो को वापस कर दूँगी।'

पाशा ने अपना सिंगारदान खोला और उसमें से सोने की दो हल्की चूड़ियाँ और एक लाल नगीने की अँगूठी निकाल कर महिला को दे दी।

महिला के चेहरे पर सुर्खी दौड़ गई। उसका रोम-रोम जैसे काँप उठा। वह बहुत क्रोध मे बोली, 'तुम मुझे क्या दे रही हो? मै तुमसे खैरात नहीं माँगती। मै तुमसे वे ही चीजे वापस माँगती हूँ जो तुमने मेरे भोले-भाले पति से उसी तरह ठगी हैं, जिस तरह तुम्हारी जैसी युवतियाँ पुरुषों से ठगा करती हैं। अभी दो दिन पहले मैंने तुम्हें अपने पति के साथ देखा था। तुम कीमती चूड़ियाँ और अँगूठी पहने हुए थी। तुम्हें मुझ पर कृपा-भाव दिखाने की जरूरत नही। मैं तुमसे आखिरी बार पूछती हूँ, तुम मेरी चीजे वापस दोगी?'

'तुम बड़ी चालाक हो।' पाशा ने कहा—वह क्रोध में आ गई थी—'मैं विश्वास दिलाती हूँ कि इन चूड़ियों और अँगूठी के अलावा तुम्हारे पति ने मुझे कुछ नहीं दिया। कभी-कभी मिठाई लाते हैं।'

'मिठाई!' महिला ने पागलों जैसी हँसी हँसते हुए कहा, 'घर पर बच्चे खाने को तरसते हैं और यहाँ तुम दोनों मिठाई उड़ाते हो। अब क्या मेरी चीजे लौटाने से तुम इन्कार करती हो!'

महिला को कोई उत्तर नहीं मिला। वह कुर्सी पर गिर पड़ी और एक टक दीवाल की ओर देखने लगी। उसके मन मे विचारों की आँधी चल रही थी।

'मै अब क्या करूँ?' वह सोच रही थी, 'अगर मै नौ सौ रुपयों का प्रबन्ध न कर सकूँगी तो उन्हें अवश्य जेल होगी, मेरे बच्चे भूखे मरेंगे। इस राक्षसी का गला घोट दूँ या इसके पैरों पर गिर पड़ूँ?'

महिला ने रूमाल से अपना मुँह छिपा लिया और सुबक-सुबक कर रोने लगी।

'मैं तुमसे बिनती करती हूँ,' उसने सिसकारियाँ लेते हुए कहा, 'तुमने ही मेरे पति का जीवन नष्ट किया है, तुम्हीं उनकी रक्षा करो। मैं जानती हूँ उनसे तुम्हें ममता रही है, लेकिन बच्चो का ख्याल करो, गरीब बच्चों का ''उन गरीब बच्चों ने क्या पाप किया है?'

पाशा उन बच्चों की कल्पना करने लगी—सड़क पर नंगे खड़े हैं, भूख से रो रहे हैं। उसके हृदय में उच्छ्वास उठने लगा।

'मैं क्या कर सकती हूँ?' पाशा ने असहाय भाव से कहा, 'तुम कहती हो मैं डाइन हूँ, मैंने तुम्हारे पति का जीवन नष्ट कर दिया। लेकिन मैं ईश्वर की सौगन्ध खाकर कहती हूँ मैंने उनसे कभी लाभ नहीं उठाया। हमारे मुहल्ले में सिर्फ मोटजा अमीर है। बाकी सब पेट काट कर रहती हैं। निकोलाई सुन्दर और सज्जन व्यक्ति हैं, इसलिए मैं उनकी ओर खिंची। हम और क्या करें...?'

'मैं तुमसे चीजें वापस माँगती हूँ। मुझे दे दो। मैं विपत्ति में हूँ...। मैंने अपने अभिमान का त्याग कर दिया है अगर तुम्हारी इच्छा हो तो मैं तुम्हारे पैरों पड़ सकती हूँ। दया करो... दया!'

पाशा भय से चिल्ला पड़ी। उसने देखा कि वह सम्भ्रान्त महिला अपने अभिमान, अपने कुलगौरव मे लिपटी हुई उसके

पैरों पर गिर पड़ने को तैयार है। अपना अपमान करने के लिये और उसका भी अपमान करने के लिये...।

'अच्छा! मैं तुम्हें सब चीजे दे दूँगी!' पाशा ने आँसू पोंछते हुए अवरुद्ध कंठ से कहा, 'वे सब अब तुम्हारी हैं। लेकिन ये निकोलाई की दी हुई नहीं हैं, और लोगों ने दी हैं। तुम्हारी जैसी इच्छा।'

पाशा ने अपना सिंगारदान खोला और उसमें से जड़ाऊ चूड़ियाँ, कई अँगूठियाँ और कई हार निकाल का महिला को दे दिए।

'इन चीजों को ले जायँ, ये आपके पति की नहीं है। फिर भी आप इन्हें ले जाइए। मै सब कर लूँगी।' पाशा को अब भी भय हो रहा था कि कहीं वह महिला उसके पैरों पर न गिर पड़े।

'अगर आप मे कुल मर्यादा है, अगर आप उनकी पत्नी हैं, तो अब आप उन्हे अपने पास रखियेगा। मैं उन्हें बुलाने नहीं गई थी। वह खुद मेरे पास आए थे।'

महिला ने आँसू भरे नेत्रों से मेज की ओर निहारा, जिस पर सब आभूषण पड़े थे और कहा, 'बस इतनी ही चीजे हैं लेकिन इतनी तो पाच सौ रुपयों की भी न होंगी।'

पाशा ने शीघ्रता से अपना सिंगारदान खोला और उसमे से सुनहली घड़ी, सुनहले बटन, सुनहला सिगरेट केस, सुनहला कलम तथा अन्य बहुत सी चीजें निकाल कर पटक दीं। उसने दृढ स्वर में कहा, 'अब मेरे पास कुछ नहीं है आप मेरी तलाशी ले सकती हैं।'

आइलान ने एक सन्तोष की साँस ली। उसने सब चीजें समेट कर रूमाल मे बाँध ली और चली गई। उसने जाते समय धन्यवाद का एक शब्द भी न कहा, न पाशा की ओर नजर उठा कर देखा।

बगल के कमरे का दरवाज़ा खुला और निकोलाई ने कमरे मे प्रवेश किया। उसका चेहरा पीला पड गया था। वह झूम रहा था, जैसे उसने गहरी पी हो। उसकी आँखों में आँसू चमक रहे थे।

'बताओ तो तुमने मुझे कौन-कौन सी चीजें उपहार मे दी हैं ?' पाशा ने उसकी ओर घूम कर कहा, 'मेरे सिर की कसम, बताओ, तुमने कब दी ?'

'चीजें ··· हूँ। कैसी नासमझी की बात है' निकोलाई कहने लगा—'हे भगवान ! मेरी पत्नी तुमसे गिड़गिड़ाती रही। तुम्हारे पैरो पड़ने जा रही थी।'

'मै तुमसे पूछती हूँ'—पाशा ने कहा कि 'तुमने कब······ कब मुझे उपहार दिये हैं ?'

'या परमात्मा मेरी पत्नी ने, जो ऊँचे खानदान की मान-मर्यादा रखने वाली युवती है, आरजू-मिन्नत की, तुम जैसी बाजारू औरत से ! वह तुम्हारे पैरों पर गिरने तक को तैयार हो गई ! यह सब मेरे ही कुकर्मों का फल है !'

निकोलाई अपना सिर थाम कर कहने लगा 'मै अपने को कभी क्षमा नहीं कर सकता। कभी नहीं ! तुम डाइन हो।' उसने घृणा की नज़रो से पाशा को देखा और काँपते हुए हाथों से

उसे दूर ढकेल दिया—'मेरी पत्नी तुम्हारे पैरों पड़ना चाहती थी.. और किसी के नहीं, तुम्हारे! हे भगवान्!!'

उसने जल्दी से कपड़े पहने। अपने को पाशा के स्पर्श से बचाता हुआ वह शीघ्रता से घर के बाहर चला गया।

पाशा कुर्सी पर गिर पड़ी और फूट-फूट कर रोने लगी। उसे दुख था कि उसने अपने सब आभूषण दे दिए। उसे याद आया, इसी प्रकार तीन साल पहले एक दूकानदार ने उसे बहुत पीटा था, और बिना किसी कारण के। पाशा और अधिक फूट-फूट कर रोने लगी।